prqFkZ v/;k;

^^MkW- d`".keqjkjh 'kekZ ds x| esa lkekftd & lkaL—frd psruk**

pr|Fk v/;k;

^^Mk- d".kejkjh 'kekk ds x| esa lkekftd & lkaL—frd psruk**

प्रस्तुत अध्याय में प्रो. कृष्णमुरारी शर्मा के गद्य साहित्य में सामाजिक– सांस्कृतिक चेतना का अध्ययन करने के लिये आपकी गद्य कृतियों का क्रमशः अध्ययन किया जाएगा। डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा की गद्य कृतियों में छः नाट्य कृतियाँ सर्वप्रथम हम क्रमशः देखते है।

vkneh dh ryk'k ¼,dkadh laxzg] lu~ 2003½ &

डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा का प्रथम एकांकी संग्रह 'आदमी की तलाश' में कुछ दस एकांकी संकलित हैं, इनमें पहला एकांकी 'निमंत्रण' है जो पूर्णतः राष्ट्रीय चेतना एवं राष्ट्रभक्ति की प्रेरणा से ओतप्रोत है। एकांकीकार ने इस एकांकी के संबंध में लिखा है– ''सन् 1965 में भारत–पाक युद्ध के समय लिखित 'निमंत्रण' एकांकी का उद्देश्य देश के नवयुवकों को 'राष्ट्र' के रक्षार्थ बड़े से बड़े त्याग के लिये सदैव तत्पर रहने की प्रेरणा के साथ ही साम्प्रदायिक एकता को पल्लवित पोषित करता है।''[1] इस एकांकी का नायक अजय भारतीय सेना में लेफ्टिनेन्ट है। वह स्वयं के विवाह के लिये घर आया हुआ है, उसकी माताजी तथा बहन सुशीला पूरे उत्साह के साथ वैवाहिक तैयारियों में जुटे हुए हैं, उनके पड़ौसी बसीर चाचा तथा जाफरी एकदम घर की ही तरह सारे कार्यों में उनके साथ जुड़े हुए हैं। विवाह की तैयारियाँ पूरे उत्साह से चल रही हैं, तभी तारवाला अजय के नाम का तार लेकर दस्तक देता हैं इसकी माँ तथा अन्य सभी लोग चिन्तित हो उठते हैं

---

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, आदमी की तलाश, पृष्ठ 17 से 24

और उससे तार के संबंध में जानना चाहते हैं। वह अत्यन्त शान्त मुद्रा में सभी को बतलाता है– ''माँ! घबराने वाली कोई भी बात नहीं है। हम लोग यहाँ शादी के निमंत्रण दने की योजना बना रहे थे, मुझे भी यह निमंत्रण ही मिला है।'' वह स्पष्ट बतलाता है उसे तुरन्त अपनी ड्यूटी संभालने के लिये बुलाया गया है। माँ चिन्तित होकर शादी के पूर्व उसे कहीं अन्यत्र भेजने के लिये तैयार नहीं है। तब वह माँ से कहता है– ''माँ! समझने की कोशिश करो। हमारी कश्मीर की पवित्र धरती पर दुष्मनों ने हमला बोल दिया है। मुझे एक दम वहीं पहुँचने का आदेश हुआ है। सारे परिवार के लोग, मित्र एवं पड़ौसी, घबराई हुई माँ को समझाने का प्रयास करते हैं और अन्ततः स्वयं के विवाह को छोड़कर अजय को मोर्चे पर जाने के लिये खुशी–खुशी तैयार होना पड़ता है। माँ भी उससे कहती है– देश की सुरक्षा ही सबसे बड़ी बात है। तेरे बापू के शब्द मेरे कानों में गूँज उठते है।– ''हम जिस आजादी के लिये आज लड़ रहे हैं, मेरा अजय उसकी रक्षा करेगा।'' हाँ बेटा ''तू अपने देश की और आजादी की रक्षा जरूर करना।''

यह संपूर्ण एकांकी किसी प्रकार की एक ऐतिहासिक घटना से प्रेरित होकर लिखा गया है। क्षत्रपति शिवाजी के वीर सैनानी नाना जी ने भी तत्काल विजय श्री के लिये अपने बेटे का विवाह स्थगित कर दिया थ। यह ऐतिहासिक तथ्य ही नाटक की मूल संवेदना है।''[1]

प्रस्तुत एकांकी बहुत छोटा होते हुए भी राष्ट्रीय चेतना एवं देश और समाज में साम्प्रदायिक भाईचारे की प्रेरणा की दृष्टि से अत्यन्त सशक्त है। नाटक के लगभग आधा दर्जन पात्र इसी मूलभूत प्रेरणा के पोषण में संलग्न दिखाई देते हैं। नाटक के संवाद भी विषयानुरूप तथा

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, आदमी की तलाश, पृ. 17 से 24

परिस्थितियों के पूर्णतः अनुकूल हैं। डॉ. चन्द्रमोहन मजेजी के शब्दों में– ''निमंत्रण में अजय की माँ अपनी समस्त खुशियों को देश–प्रेम पर न्यौछावर कर देती है।''[1]

प्रस्तुत नाटक का दूसरा एकांकी 'पुर्नदीक्षा'' पूर्णतः सामाजिक–सांस्कृतिक चेतना से परिपूर्ण है। संग्रह के प्रायः सभी एकांकी इसी चेतना का ताना–बाना बुनते हुए दिखलाई पड़ते हैं। संग्रह के एकांकियों के संबंध में प्रसिद्ध कवि एवं फिल्मी गीतकार श्री विट्ठल भाई पटेल लिखते हैं–

डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा के एकांकी संकलन 'आदमी की तलाश' के सभी दस एकांकी मंचन की दृष्टि से लिखे गये हैं। इनकी कथावस्तु जीवन से चुनी गयी है। डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा की चिंता, चिन्तन, अनुभव, उनकी संवेदनशीलता इन पात्रों के माध्यम से व्यक्त हुई है। संसार का संपूर्ण साहित्य, शिल्प, रचनात्मक घटनाएँ, मनुष्य को संस्कारित करने के लिये हैं। मनुष्य का क्रमिक विकास पशु से मानव तक की यात्रा में यही तत्व विद्यमान है– आज आदमी डॉक्टर, वकील, नेता, वैज्ञानिक, पत्रकार और जाने क्या–क्या है, पर आदमी नहीं। डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा ने इस 'आदमी की तलाश', पिता, पुत्र, पत्नी, नौकर, देशभक्त, नौजवान तथा व्यापारी के माध्यम से की है। आज जिन मानव मूल्यों का अभाव है, उन्हें बहुमान देना तथा जिस प्रकार आदमी, चाहे साधु–संत क्यों न हो, राजनीति की चकाचौंध से प्रभावित है। साधु–संतों में भी राजनीति में प्रवेश करने की लालसा है। एकांकीकार ने 'पुर्नदीक्षा' एकांकी में रेखांकित कर पुर्नदीक्षित किया है।''[2]

---

[1] सांध्य समाचार, 22 जनवरी 2004, पृष्ठ 2

[2] श्री विट्ठल भाई पटेल द्वारा डॉ. शर्मा को 29 फरवरी सन् 2004 लिखित पत्र से

'पुर्नदीक्षा' एकांकी में स्वामी जी का एक शिष्य स्वामी अपूर्वानन्द राजनेताओं के चकाचौंध मय जीवन से अत्यन्त प्रभावित हो जाता है और वह राजनीति में सक्रिय भागीदारी के लिये लालायित है, लेकिन स्वामी जी अपने शिष्य अपूर्वानन्द को आग्रह पूर्वक राजनीति के दलदल से दूर रहने के लिये कहते हैं– ''प्रिय अपूर्व राजनीति में सक्रिय भागीदारी के बिना बाहर से ही उसे सही दिशा देने तक अपने कर्तव्य को सीमित रखने में कोई बुराई नहीं है, किन्तु किसी भी रूप में राजनीति के दलदल में स्वयं को लिप्त करना सरासर अविवेकपूर्ण है। वत्स! इस दंगल में मत कूदों अपनी छीछा लेदर मत कराओ। यदि इस दल–दल में एक बार सन गये तो इससे मुक्ति असंभव है। समझे न! अपने पतन को आमंत्रण मत दो।''[1] एकांकी के अन्त में स्वामी जी के शिष्य अपूर्वानन्द का अपने गुरुदेव से प्रेरणा मिलने के बाद ह्रदय परिवर्तन हो जाता है और वह विव्हल होकर कहता है– ''क्षमा, गुरुदेव! क्षमा करें। (स्वामी जी के दोनों चरण पकड़कर) गुरुदेव! मुझे पतित होने से बचा लिया आपने। भटक गया था मैं, आज आप से पुर्नदीक्षा पाकर मैं धन्य हो गया। तब की दीक्षा ने मुझे भक्ति का प्रसाद दिया था और अब की दीक्षा ने मुझे ज्ञान का नव प्रकाश दिया है। मैं धन्य हो गया। यही एकांकी समाप्त हो जाता है।

प्रस्तुत एकांकी के संवाद भारतीय आध्यात्मिक चिन्तन तथा मनीषा को अपने में समेटे हुए हैं एवं सामाजिक–सांस्कृतिक चेतना के संवाहक हैं। स्वामी जी जहाँ अपने कथनों में दोहा तथा आध्यात्मिक, चौपाईयाँ भी उद्धृत करते जाते हैं, वहाँ उनके कथन और भी प्रभावशाली बन जाते हैं। संपूर्ण वातावरण ऐसे स्थलों पर भक्तिमय बन जाता है।

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, 'आदमी की तलाश' – 'पुर्नदीक्षा', पृष्ठ 32

देश और समाज को पवित्र विचार और सेवा की नवप्रेरणा देना ही प्रस्तुत एकांकी का प्रमुख उद्देश्य है। एकांकीकार को अपने इस उद्देश्य में पूर्ण सफलता प्राप्त हुई है। डॉ. ब्रज भूषण सिंह संग्रह के एकांकियों की समीक्षा करते हुए लिखा है– ''हिंदी एकांकी परम्परा में एकांकीकार डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा का एकांकी संग्रह 'आदमी की तलाश' महत्वपूर्ण है, जो वस्तु एवं संरचना के धरातल पर मानवीय संवेदना की तलाश करती हुई व्यंजकता एवं प्रभावशीलता में एकांकी के शिल्प पर खरी उतरती है। इन एकांकियों में आज के भौतिकवादी युग में खोती जा रही आदमियत को सर्वोच्च मूल के रूप में रखा गया है। लेखक का रचना कार्य 1960 से लेकर आज समय तक फैला है। लेखक अपने पूरे विकास क्रम में जीवन मूल्यों के प्रति प्रतिबद्ध है। संग्रह का हर एकांकी परिपक्व, सारगर्भित तथा लोकहित में रत है, जिसका प्रयोजन लोक चेतना है।''[1]

संकलन का तीसरा एकांकी 'गोद' है हमारे देश में गोद लेने की एक विशिष्ट परम्परा देखने को मिलती है। निःसंतान दम्पत्ति प्रायः अपने परिजनों के बच्चो को ही गोद लिया करते है। या फिर जाति–बिरादरी के किसी बच्चे को गोद ले लेते हैं, लेकिन 'आदमी की तलाश' एकांकीकार ने इस प्रचलित परम्परा के विपरीत एक अछूत परिवार के बालक को गोद लेना दर्शाकर समरसता का जो सन्देश दिया है, वह निश्चय ही स्वागत योग्य है। 'गोद' एकांकी में जीवनलाल कपड़े का एक बड़ा व्यापारी है, रुक्मिणी जीवनलाल की पत्नी है। जीवनलाल की माँ मुनीम तथा नौकर बंशी कुल पाँच पात्र हैं। इन पाँचों पात्रों के इर्द–गिर्द नाटक का कथानक घूमता है। सभी का अत्यन्त मनोवैज्ञानिक

[1] 'छप्ते–छप्ते' कोलकाता, रविवार, 31 अक्टूबर 2004, पृष्ठ 4

ढंग से चरित्र–चित्रण इस एकांकी में हुआ है, जीवनलाल कथा नायक है। उसकी धर्मपत्नी रुक्मणि उसके हर मनोरथ में पूर्णरूपेण सहयोग देने वाली भारतीय गृहणी है। नाटक के चरमोत्कर्ष में एक मन को हिला देने वाली एक घटना घटित होती है, जीवनलाल को जैसे ही यह दुःखद सूचना मिलती है कि वंशी की पत्नी ने एक बच्चे को जन्म देने के बाद अस्पताल में ही शरीर छोड़ दिया, प्रसव के उपरान्त ही उसका वहाँ देहान्त हो गया। अपने मुनीम को वह शोक निमग्न होकर कामकाज तुरन्त बन्द कर देने के लिये निर्देशित करता है। साथ ही जीवनलाल अत्यधिक बेचैन होकर रुक्मिणी से कहता है– आज मैं तुम्हारी 'गोद' माँगता हूँ – ''मुझे तुम्हारी गोद चाहिये– तुम्हारी गोद उस मासूम बच्चे के लिये माँ की गोद चाहिये। बोलो, दे सकोगी?''

रुक्मिणी– ''अवश्य, यह तो आपने मेरे होठों की बात छीन ली है। मैं जो बात संकोच के कारण नहीं कह पा रही थी, उसे कहकर आपने मेरा भार हल्का का कर दिया है। (थोड़ा सोचकर) माँ जी से भी थोड़ा पूछना पड़ेगा।''[1] जीवनलाल की माँ इस प्रस्ताव से पहले तो असहमत होती है, लेकिन जब जीवनलाल माँ से कहता है– ''ओहो, माँ तुम तो ऐसा न कहो। अपने उस मुरलीधर से पूछो– उसके यहाँ किसको नीच और किसको ऊँच माना जाता है। उसके यहाँ तो कर्मों की तुला पर ही अच्छे–बुरे की तोल होती है, खरे और खोटे की परख के लिये वहाँ तो केवल कर्मों की ही कसौटी है। थोड़ा सोचो तो माँ! उस नन्हे बच्चे ने तो अपनी माँ का दूध भी नहीं पिया। समाज द्वारा कहीं जाने वाली छोटी जाति की माँ के गर्भ से जन्म लेने मात्र से वह नीच कैसे हो सकता है ? अंततः अपने पुत्र जीवनलाल के इस तर्क से

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, 'आदमी की तलाश' ,पृष्ठ 40

माँ सहमत हो जाती है और यहीं रुक्मिणी, जीवनलाल की माँ के बच्चे को गोद लेने के प्रस्थान के साथ एकांकी समाप्त हो जाती है।

सुप्रसिद्ध नाट्य समीक्षक डॉ. लक्ष्मण सहाय लिखते हैं कि– ''प्रस्तुत एकांकी में दया, स्नेह, वत्सलता, सहिष्णुता, समत्व, ममत्व, त्याग, जैसी सद्वृत्तियाँ पोषित करने की अपूर्व क्षमता है। ऐसी ही उच्च मानवीय भावनाओं के संप्रेषण का प्रयास यहाँ किया गया है। मूलतः सच्चे साहित्यकार और ईमानदार रचनाकार का 'सर्व जन हिताय' ही लक्ष्य होता है, जिसका अक्षरशः निर्वाह एकांकीकार ने किया है।''[1]

मराठी के सुप्रसिद्ध नाटककार प्रो. रामजोगलेकर ने अपनी प्रतिक्रिया देते हुए लिखा है– ''आपके पात्रों से इतनी सहजता से घुल–मिल गया कि लेखक एवं लिखित कृति में फर्क ही शेष नहीं रह गया, आपने प्रस्तुत एकांकियों की भाषा, व्यवहार की रीतियाँ एवं अनुभूतियाँ आपकी शैली में अभिन्न रूप से घुल–मिल गये हैं। आपके चुने हुए विषय पात्र एवं उनके व्यवहार केवल ऊपरी रहने के बजाए गहराईयों को पाटकर वस्तुस्थिति की जड़ों का विश्लेषण करते हैं।''[2]

प्रसिद्ध साहित्यकार श्री रघुनाथ प्रसाद तिवारी ने इस एकांकियों के संबंध में अपनी समीक्षा में लिखा है– ''रंगमंच पर प्रस्तुत करने योग्य नाटकों की संख्या हिंदी में बहुत कम है। बहुमुखी प्रतिभा के धनी डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा का एकांकी संग्रह 'आदमी की तलाश' प्रकाशित हुआ है। सामान्य जन–जीवन की विभिन्न घटनाओं, विडम्बनाओं, परिस्थितियों, प्रतिनिधि पात्रों तथा चारित्रिक विविधताओं और विकृतियों को आधार बनाकर डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा ने प्रभावपूर्ण एकांकी की रचना की है।

---

[1] मासिक 'साहित्य सागर' भोपाल, मई 2004, पृष्ठ 33

[2] प्रो. राम जोगलेकर, पुणे द्वारा एकांकीकार डॉ. शर्मा को लिखित 29 जनवरी 2004 के पत्र से

रोजमर्रा की परिस्थितियों के आस–पास बुने गये ये एकांकी नाटक रंगमंच की आवश्यकताओं के अनुरुप है, यह विशेष रूप से प्रशंसनीय है। विषयवस्तु के रूपांकन में सकारात्मक सोच और आदर्शोन्मुख सामाजिक सरोकारों के समावेश का स्तुत्य प्रयास किया है।''[1]

'आदमी की तलाश' एकांकी का यहाँ विशेष रूप से उल्लेख करना चाहेंगे। प्रस्तुत एकांकी में नाटककार ने एक ऐसे अद्‌भूत दृश्य का आयोजन किया है, जो सचमुच ही अत्यन्त मौलिक, प्रभावित करने वाला है। मन नाटक का मुख्य पात्र है, जो अपनी वेश–भूषा और सादगी से बहुत प्रभावित करता है। नाटक में वह एक चटाई पर बैठकर अनेक व्यक्तियों, समुदायों में से उनके एक–एक प्रतिनिधि का साक्षात्कार लेता है, इन सभी व्यक्तिों की वेश–भूषा, बोल–चाल तथा व्यवहार और उनकी बातचीत के लहजे से मन उनमें से 'आदमी की तलाश' पूरी करता है, उसे नेता, समाजसेवी, सुधारक, पत्रकार, शिक्षक, इत्यादि अनेक व्यक्ति प्रभावित नहीं कर पाते। नाटक के अन्त में एक सामान्य सा व्यक्ति जो अनपढ़ सा दिखता है और मन के समक्ष उपस्थित होकर निवेदन के स्वर में एक खोए हुए अबोध बालक को उसके माता–पिता से बड़ी बेचैनी के साथ मिलवाने का आग्रह करता है। वह करुणाविभूत होकर मन से कहता है– ''महाराज! बालक बहुत दुःखी है।''[2] उसको उत्तर देते हुए मन कहता है– ''क्यों न होगा? सबेरे से अपने माता–पिता से बिछड़ा है, छोटा सा ही तो है, (रूककर) पर भाई मुझे तो आप भी बहुत बेचैन दिख रहे हो। (गदगद कण्ठ से) यही तो मनुष्यता है। (जेब से बीस रुपए का एक नोट निकालकर) लो भाई! अपना ईनाम।'' प्रतिउत्तर में वह आदमी आँखें फाड़कर (मानो किसी नीच कर्म से सावधान हो रहा हो) राम–राम

[1] मध्यप्रदेश विवरणिका (मध्यप्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन, भोपाल), फरवरी सन् 2004, पृष्ठ 4
[2] वही, पृष्ठ 4

(विसमय से) ईनाम! कैसी ईनाम ? क्यों ईनाम ? मन का उस आदमी से जो सहज वार्तालाप होता है वह सचमुच ही मर्मस्पर्शी है।

यहीं आकर 'आदमी की तलाश' पूर्ण हो जाती है। मन हर्षविभोर होकर कहता है– ''भाई आप धन्य हैं। मुझे ऐसे ही आदमी की तलाश थी। पता है, कितने नरदेहधारी व्यक्तियों को मैंने आज खखोल डाला है और अभी तो काफी बचे हैं। (शेष सूची पढ़कर) थानेदार, डॉक्टर, कम्पाउण्डर, कण्डक्टर, दूधवाला, घीवाला, तेलवाना, परचूनिया, क्लर्क, अरे! अभी तो बहुत लोग बचे हैं। पर मुझे इनमे ंसे किसी के विषय में कोई भ्रम नहीं है। इन सभी को आज आदमी के दर्शन कराए देता हूँ।[1]

डॉ. उपेन्द्र विश्वास ने प्रस्तुत एकांकी संग्रह की एकांकी विशेषः 'आदमी की तलाश' के सन्दर्भ में समीक्षा करते हुए लिखा है– ''एकांकी 'आदमी की तलाश' का शिल्प डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल के नाटक 'व्यक्तिगत' की याद ताजा कर देता है, इस एकांकी में निर्देषक, अभिनयकर्ता तथा प्रकाश व्यवस्थापक को अपनी कला का प्रदर्शन करने का काफी स्कोप दिया गया है। इसे प्रयोगधर्मी एकांकी की श्रेणी में रखा जा सकता है।''[2]

'विध्वंस और निर्माण, 'कोहरा', 'टूटते घेरे', 'पक्का इरादा', 'काली छाया' तथा 'नई आँखें' भी इस संग्रह के अन्य ऐसे एकांकी हैं, जो अपने उद्देश्य को पूर्ण करते हुए समाज को जागृति का सन्देश देते हैं।

njkxk lkgc ¼ukVd] lu 2005½ &

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, 'आदमी की तलाश', पृष्ठ 61
[2] दैनिक स्वदेश, ग्वालियर, रविवार, दिनांक 29 फरवरी 2004, पृष्ठ 6

दरोगा साहब एक पूर्ण कालिक नाटक है, प्रस्तुत नाटक में आज के छोटे बड़े सभी पुलिस अधिकारियों पर सीधे–सीधे व्यंग्यात्मक प्रहार किये गये हैं। नाट्कार ने निवेदन के अन्तर्गत लिखा है– ''आज के अनेक भृष्ट नेताओं तथा कर्तव्यविमुख पुलिस कर्मियों का अपवित्र गठबंधन देश और समाज के लिये अत्यन्त घातक हैं। प्रस्तुत नाटक के माध्यम से ऐसी ही कुछ सामाजिक चिन्ताओं को अभिव्यक्ति दी हैं।''[1]

नाटक का कथानक बहुत छोटा है। लगभग ढाई दिन के सीमित समय में, प्रायः पुलिस के एक ही थाने में सब कुछ घटित होता हुआ दिखाया गया है, नाटककार ने लिखा है कि इस नाटक का घटनाक्रम मंच पर बहुत कम घटित होकर अन्यत्र घटित घटनाओं की सूचनाओं के माध्यम से ही कथा प्रवाह उत्कर्ष तक पहुँचता है। नाटक के प्रथम चार अंकों में एक ही पुलिस थाने के दृश्य है और और अंतिम पाँचवे अंक में 'नेताजी' की बैठक (डाइंग रूम) का दृश्य है। जहाँ कथानक की चरम परणनति होती है, इसी पाँचवे अंक में भृष्ट दरोगा को निलम्बित किये जाने के आदेश के साथ ही विभागीय जाँच तथा थाने से हटाकर पुलिस लाईन में अटैच किये जाने के आदेश प्राप्त होते हैं। इसी बिन्दु पर पहुँचकर नाटक समाप्त हो जाते हैं।''[2]

इस नाटक के संबंध में प्रसिद्ध कथाकार श्री विष्णु प्रभाकर जी ने प्रस्तुत नाटक की बहुत प्रशंसा की है तथा इसे मंचन के सर्वथा उपयुक्त माना हैं।''[3] इसी प्रकार की अपनी प्रतिक्रिया में वरिष्ठ सात्यिकार डॉ. परुशराम (बिरही) ने भी नाटककार को लिखा था– ''पुलिस कर्मियों में भ्रष्ट और ईमानदार पात्रों की संख्या बराबर–बराबर

---

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, दरोगा साहब, पृष्ठ 07
[2] वही, पृष्ठ 7
[3] 12 दिसम्बर, संस्करण 2005 का लिखित पत्र

रखकर आपने यह सन्देश दिया है कि पुलिस में ईमानदार लोगों की कमी नहीं है, वे कुछ कर नहीं पाते, नाटक की भावना पात्रानुकूल है, गतिशील है और स्वाभाविक 'दरोगा' का चरित्र ऐसा प्रस्तुत किया गया है कि वह अपनी बिरादरी का प्रतिनिधि पात्र बन जाता है सभी थानों में जेसा टी.आई. होता है, बिल्कुल वैसा ही है दरोगा साहब, कोलकाता से प्रकाशित 'दैनिक छप्ते–छप्ते' के साहित्य संपादक डॉ. श्री निवास शर्मा ने भी नाटककार को लिखा था– ''थाना प्रभारी (दरोगा) को केन्द्र में रखकर लिखा गया, आपका व्यंग्य नाटक सामाजिक होने के साथ ही एक बड़े सामाजिक उद्देश्य को पूरा करता है। नौकरशाहो, पुलिस अधिकारियों में व्याप्त भ्रष्टाचार दरअसल राजनीतिक भृष्टाचार की देन है। तथाकथित जननेता यदि आपादमष्तक भृष्ट और चरित्रहीन न होते तो देश का यह बुरा हाल न होता।''[1]

म.प्र. मानव अधिकार आयोग के तत्कालीन अध्यक्ष न्यायमूर्ति श्री नारायण सिंह जी आजाद ने भी प्रस्तुत नाटक की सराहना करते हुए लिखा था– ''नाटक 'दरोगा साहब' में आपने चरित्रों के क्रियाकलापों का जीवन्त शैली में सही वर्णन किया है– आपकी इस कृति का उपयेाग हम मानव अधिकार आयोग में भी ऐसे चरित्रों के जीवन के वास्तविक कार्य कलापों का मूल्यांकन अवश्य करेंगे।''[2]

मासिक 'सुपर इण्डिया' प्रतापगढ़ के संपादक श्री वृन्दावन त्रिपाठी (रत्नेश) ने भी नाटक को सभी दृष्टियों से एक सफल नाटक निरुपित करते हुए मंचन की दृष्टि से इसे एक सफल नाटक कहा है।''[3]

---

[1] नाटककार को लिखित दिनांक 6 दिसम्बर सन् 2005 के पत्र से
[2] नाटककार को दिनांक 28 नवम्बर 2005 के लिखित पत्र से।
[3] मासिक सुपर इण्डिया, प्रतापगढ़, मार्च सन् 2006, पृष्ठ 2

नाटक के संवाद बहुत स्वाभाविक हैं, संक्षिप्त हैं तथा पात्रों एवं परिस्थितियों के सर्वथा अनुकूल हैं। 'नेताजी' तथा पुलिस के दरोगा के काले गठजोड़ को स्पष्टकर्ता प्रस्तुत संवाद देखिए– ''रेड पड़ गयी और मुझे खबर तक नहीं। वाह भई, वाह (पुनः फोन पर) हाँ नेताजी! अभी तो इसकी दुकान और गोदाम को शील भर किया है।..... जी! जी! मैंने कुछ नहीं किया। मुझे तो पता था कि कल्लूमल आपका आदमी है। इसीलिये मैंने इसकी तरफ देखा तक नहीं। पर उनसे– सी.एस.पी से बात आप ही कर ले– उन्हें तो आप ही राइट कर सकेंगे..... (फोन रखकर कल्लूमल से) कल्लूमल! बैठ जा भाई बाप का फोन था। थोड़ी देर में मंत्री जी का भी मैसेज आ ही जाएगा। तू तो सबका बाप है। मुझे मालूम है, तेरे तार तो ऊपर तक जुड़े हैं..... (सिर पकड़कर) काम करे भी तो कैसे करें ? वे– सबके बाप तो कुछ करने ही नहीं देते। उन्हें तो वोट चाहिये– कुर्सी चाहिये, ये ऐसे हजारों कल्लूमल ही तो उन्हें सब दिलवाते हैं। वाह रे प्रजातंत्र – तेरी जय हो! विजय हो!।''[1]

ऐसे अनेक स्वाभाविक संवाद प्रस्तुत नाटक में सहज ही देखे जा सकते हैं। इस प्रकार के संवाद जहाँ एक ओर पात्रों का चरित्र चित्रण स्वाभाविक रूप से करते हैं, वहीं दूसरी ओर उनमें वर्तमान व्यवस्था के प्रति जो व्यंग्य हैं। उसकी तीक्ष्णता, अत्यन्त सटीक एवं स्वाभाविक है, यही इस नाटक के संवादों की प्रमुख विशेषता है।

प्रस्तुत नाटक की समीक्षा करते हुए नाट्यकला मर्मज्ञ डॉ. लक्ष्मण सहाय ने लिखा है– ''शर्मा जी को उन सभी तत्वों का ज्ञान है, जिनकी मंचन में आवश्यकता पड़ती हैं। इसलिये 'दरोगा साहब' नाटक के प्रारम्भिक अंक से चौथे अंक तक दरोगा साहब के बैठने का एक ही स्थान

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, दरोगा साहब, पृ. 24

दर्शाया गया है। दृश्य विन्यास भी सामान्य है, जो पुलिस के परिवेश की जानकारी देता हैं एकसा दृश्यविन्यास होने के कारण मंचन के समय बार–बार दृश्य विन्यास की आवश्यकता नहीं पड़ती 'दरोगा साहब' नाटक का पाँचवा अंक नेताजी के घर पर एक कमरा है, इसके विन्यास में भी दृश्य अभिकल्पक को कोई कठिनाई नहीं आएगी..... दृश्य विधान के लिये 'रंग संकेतों का उल्लेख यथा संभव किया गया है, जिनसे दृश्य विधान की मात्र जानकारी ही नहीं मिलती, अपितु वातावरण और पात्र की मनःस्थिति की जानकारी भी मिलती है.....। नाटक यथार्थवादी है, इसलिये भाषा सामान्य से सामान्य जन के निकट की है ... यथार्थ परक वस्तु, पात्र, संवाद, प्रसंग, भाषा सभी कुछ स्वाभाविक हैं। नाटक में प्रयुक्त यथार्थवादी शैली ने सोने में सुहागा का काम किया है।''[1]

प्रस्तुत नाटक की समीक्षा करते हुए डॉ. अशोक प्रियदर्शी ने लिखा है– 'दरोगा साहब' नाटक की समीक्षा करते हुए लिखा है– ''दरोगा साहब थाने के बहाने भ्रष्टाचार की पोल खोलता नाटक है। प्रस्तुत नाटक की कथा और उस क्रम में उपस्थिति किये गये प्रसंग रोचक हैं। और उसे आप पढ़ना शुरु करें, तो एक ही श्वास में पढ़ जाएगा फिर भी कथा में पूर्णकालिक नाटक वाली सघनता का अभाव लगता है, कथा के केन्द्र में दरोगा साहब हैं और उनका थाना है। कुल पाँच अंकों में विभाजित नाटक में यह तो है ही कि थाने के बहाने समाज के विभिन्न तबकों के लोगों की पोल खुलती चलती है, दरोगा जी वैसे ही दरोगा हैं, जिनसे आए दिन हमारा सावरकर पड़ता रहता है। यानी पुलिस थाना पैसा कमाने तथा भ्रष्टाचार को बढ़ावा देने की जगह बनता गया है, कारण हमारी मानसिकता भी है और समाज के

[1] मासिक लोकयज्ञ (बीड), महाराष्ट्र – मार्च सन् 2006, पृष्ठ 14

विभिन्न वर्गों, विशेषकर राजनेताओं का दवाब भी है। नाटककार की सकारात्मक दृष्टि का पता इस बात से चलता है कि थाने में एक सिंह साहब भी हैं, जो ईमानदारी के साथ इस मकहमे में रहना चाहते हैं, लेकिन स्पष्ट है थानों में ऐसे ईमानदार सिंहों का गुजारा नहीं होता।''[1]

प्रस्तुत नाटक आज की परिस्थितियों, राजनीति विद्रूपदाओं, देशी पुलिस दरोगाओं तथा ऐसे ही कलुषित गठजोड़ों की यथार्थ परख एवं जीवन्त व्याख्या प्रस्तुत नाटक में देखने को मिलती है।

समीक्ष्य नाटक की संवाद संरचना तथा यथार्थ परक वस्तु, पात्र एवं भाषा की प्रशंसा करते हुए डॉ. इकबाल अहमद मंसूरी (शास्त्री) ने लिखा है– ''भृष्ट पुलिस प्रशासन का यथार्थ रूप और सफेदपोश समाजसेवक– नेता के साथ–साथ पथभृष्ट पत्रकार की भूमिका को समाज के समक्ष बड़ी मार्मिकता के साथ प्रस्तुत किया है। इस नाटक में लेखक ने यह स्पष्ट कर दिया है कि लोकतंत्र में पुलिस की आज क्या भूमिका है तथा भृष्ट नेताओं का किस प्रकार संरक्षण पुलिस एवं अपराधियों को प्राप्त है।''[2]

निष्कर्ष रूप से कह सकते हैं कि प्रस्तुत नाटक अपने उद्देश्य की पूर्ति में पूर्णतः सफल रहा है तथा अभिनेयता की दृष्टि से भी प्रस्तुत नाटक पूर्णतः सफल है।

urkth ¼ukVd] lu 2007½

'नेताजी' प्रो. कृष्णमुरारी शर्मा का एक बहुचर्चित व्यंग्यात्मक नाटक है, नाटक में वर्तमान राजनीति से जुड़े व्यवसायी नेताओं और

---

[1] त्रैमासिक 'छायानट' लखनऊ (उ.प्र.) अंक 118, अप्रैल से जून सन् 2007, पृष्ठ 109
[2] हिन्दी मासिक 'भाग्य दर्पण' अप्रैल सन् 2006, पृष्ठ 26

उनके परिजनों तथा उनकी सारे सुख भोगने वाली और नेताओं की काली कमाई से गुलछर्रे उड़ाती संतानों का एक यथार्थ चित्र को समाज के सम्मुख प्रस्तुत किया गया है। नाटक की रचना का उद्‌देश्य भी मूलतः आज की राजनीति को परिष्कृत करना तथा समाज सेवा की आड़ में अनाप–सनाप कमाई करने वाले नेताओं का पर्दाफाश करके राजनीति को सही अर्थों में समाज सेवा का एक पवित्र माध्यम बनाना है नाटक में आरम्भ से अन्त तक जो कुछ भी घटित होता है, वह सब कुछ नेता के चरित्र को उजागर करने के लिये ही होता है। नाटक के अन्य पात्र भी इसी प्रमुख प्रयोजन की सिद्ध में सहायक रहते हैं।

नेताजी का कथानक सीधे–सीधे पाँच अंकों में विभक्त है। नाटक का संपूर्ण आयोजन कथित नेता की बैठक में पूर्ण होता है। नाटक के प्रथम अंक में नेताजी का साक्षात्कार लेने के लिये 'हिंदी टुडे न्यूज' का संवाददाता अपने पत्र के विशेषांक के लिये नेताजी का इन्टरव्यू लेने पहुँचता हैं वह नेताजी से कहता है कि हम अपने इस विशेषांक में स्वतंत्रता संग्राम के सेनानियों के जीवन वृत्तान्त के साथ ही उनके जीवन के कुछ प्रेरक प्रसंगों को समाज के सामने पूरी प्रमाणिकता के साथ लाना चाहते हैं, जिससे आने वाले समय में देश भक्ति की प्रेरणा मिलती रहै।''[1] वह नेताजी की असलियत को इस साक्षात्कार के माध्यम से समाज के समक्ष लाना चाहता है।

सर्वप्रथम वह कथित नेता से उसकी शैक्षणिक योग्यता जानने का प्रश्न करता है।

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, नेताजी, पृष्ठ 14

नेता उत्तर देता है– ''आप स्कूल–कॉलेज की शिक्षा के बारे में पूछते हैं न! अरे, वो शिक्षा किसी काम नहीं आती। हम जीवन की पाठशाला में जो कुछ पढ़ा हूँ वह काम आ रहा है, आज (रूककर) वैसे हम नॉन मैर्टिक तक पढ़ा हूँ। उस जमाने में वही बहुत होता था। हौले नौकरी लग जाती थी।..... हम ससुरा दो बार मैर्टिक की परीक्षा दी, पर एक भी विषय मे पास नहीं हुआ। का करे! तकदीर खराब रही और फिर पन्द्रह वर्ष का रहा, तभी शादी हो गयी। अरे! फिर पढ़ाई होती है का ? (हँसी) बताईये न, बस घर–गिरस्ती के चक्कर में फँस गये।''[1] इसी क्रम में नेताजी के व्यक्तिगत जीवन की कुछ अन्य बातें भी वह उससे उगल वाने के लिये कुछ अन्य प्रश्न करता है, पत्रकार नेता से उसके स्वतंत्रता संग्राम सेनानी होने के संबंध में प्रामाणिक सूचना प्राप्त करना चाहता है। पत्रकार उस संबंधित सूची में नेता का नम्बर क्या है ? यह पूछता है, इसी क्रम में वह पूछता है कि क्या स्वाधीनता संग्राम के सिलसिले में वह जेल भी गये थे क्या यदि गये भी तो कितने समय तक जेल में रहे। नेता बतलाता है कि आजादी की लड़ाई में वह जेल कभी नहीं गया नेता का उत्तर देखें– ''अरे, भाई! स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में हम दस वर्ष के रहे होंगे , छोटे थे, इस कारण पुलिस की नजर में नहीं आता था। बस हम तमाशा देखने के लिये नेताओं के पीछे–पीछे भीड़ में घूमते रहते थे। हाँ, पर 'भारत माता की जै' पूरे जोश के साथ बोलता रहा। कभी कभार नेताओं का सामान कभी चिट्टी, पत्री भी पहुँचाई, इधर से उधर बताईये न! जे का छोटा काम था ? अरे! अँगरेज के डर के मारे अच्छे–अच्छे न की पजमियाँ गीली होत देखी है हमने।''[2] पत्रकार फिर नेता को कुरेदता है कि आप जिस समय छोटे थे और

---

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, नेताजी, पृष्ठ 16
[2] वही, पृष्ठ 18

जेल कभी गये ही नहीं, तब आपको स्वधीनता सेनानी कैसे मान लिया गया। नेता उत्तर देता है– ''पत्रकार भाई! बीच में नियम आ गया था कि जिनका जेल–रिकॉर्ड नहीं मिल रहा है, ऐसे लोग किसी सैनानी से तस्दीक करा लेवें कि उन्होंने आजादी के लिये काम किया था। बस हम भी अपनी बिरादरी के एक सेनानी से तस्दीक कराके बन गया सैनानी। ऊ मैं का कष्ट। कलेक्टर ने बना दिया परिचय–पत्र उसी तस्दीक के आधार पै समझे न।''[1] पत्रकार स्पष्टतः नेता से कहता है कि तब वह असली स्वाधीनता सेनानी नहीं हैं। इस रोचक इन्टरव्यू में नेता पत्रकार को बतलाता है कि उसके मौहल्ले का एक खोमचे वाला गजक बेचते–बेचते भगदड़ में फँस गया और चार महीने जेल में रहा नेता कहता है– ''जेल से छूटते वह बन गया सैनानी बाद में वा रमुआ के तस्दीक से जिले में न जाने कितने बन गये सैनानी।''[2] पत्रकार कहता है कि ऐसे फर्जी वाड़े की जाँच होनी चाहिये, क्योंकि ऐसे नकली सेनानियों को अस्पतालों में फ्री दवा, बसों में फ्री पास और ऐसी ही अनेक सुविधाएँ मिल रही हैं, जबकि वे इन सुविधाओं के वास्तविक हकदार नहीं हैं। इसी तरह पत्रकार नेता से उसके राजनीतिक जीवन की और भी अनेक बातें उगलवा लेता है। वह उससे कहलवा लेता है कि वह जातिवादी है और जातिवादी समीकरण के कारण ही एक वर्ग विशेष का नेता बना बैठा है, पत्रकार नेता से यह भी उगलवा लेता है कि आज के पूँजीपति, उद्योगपति भी नेताओं को राजनीति के लिये धन उपलब्ध कराते हैं। साक्षात्कार के इस क्रम में वह नेता से वर्तमान जातिगत आरक्षण नीति के संबंध में भी प्रश्न करता है वह इस नीति को देश और समाज हित में नहीं मानता। इस संबंध में नेता का उत्तर इस

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, नेताजी, पृष्ठ 18
[2] वही, पृष्ठ 19

प्रकार है– ''हाँ जी हाँ, बाबा साहब का भी यही मत था और स्व. नेहरु जी तथा देश के अन्य नेक नेता इस मत के थे कि दलित और पिछड़े या अन्य जातियों के गरीब, साधनहीन बच्चों को अच्छी से अच्छी शिक्षा व सुविधाएँ देकर उनका आत्मबल विकसित किया जाए और उन्हें सुयोग्य तथा आत्मनिर्भर बनाया जाए। अच्छी से अच्छी शिक्षा से उनमें आत्म गौरव और देश प्रेम जाग्रत किया जाए। इस आरक्षण नीति ने तो इन्हें सुविधाभोगी बना दिया है।''[1] पत्रकार नेता से अंतिम प्रश्न और करता है– ''इसका परिणाम क्या होगा?, नेताजी का उत्तर इस प्रकार है– ''अरे! साफ दिख रहा है, यदि यही सब चलता रहा तो देश मे जाति–संघर्ष भड़क उठेगा। समरसता की जगह इस नीति के कारण परस्पर कटुता ही बढ़ रही है। इससे देश का बहुत नुकसान हो रहा है पर इसकी चिन्ता हमारे आकाओं को कतई नहीं है।''[2]

नाटक के अन्य अंकों में भी नेता और पीत पत्रकारिता से जुड़े पत्रकार, पुलिस, दरोगा, इत्यादि भृष्ट लोगों से नेता के गठजोड़ उजागर होते हैं, नाटक के तीसरे अंक में पार्टी के लिये चन्दा और इसके हिसाब–किताब की गड़बड़ियाँ नेताओं के आस–पास चापलूसों की भरमार, पार्टी के टिकिट वितरण की धाँधलियाँ, पार्टी के युवा कार्यकर्ताओं का आक्रोश तथा समाज सेवी संस्थाओ ंको चन्दा देने में कृपणता इत्यादि बातें प्रकट होती हैं, इसी क्रम में नेताओं द्वारा अपने वर्चस्व और प्रभाव को बढ़ाने के लिये गुण्डों को पालना और गुण्डों को दारु तथा पैसे उपलब्ध कराना जैसे घृणित कामों की घृणास्पद कथाएँ सामने आती हैं। चौथे अंक में एक स्कूल शिक्षिका से नेताओं के

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, नेताजी, पृष्ठ 24
[2] वीह, पृष्ठ 25

अनैतिक संबंधों की बात उजागर होती है। उसकी कथित पत्नी–प्रेमिका उससे कहती है– ''आज मैं न तो विवाहित ही हूँ और न क्वारी ही, आपके और अपने रिश्ते का सही नाम चाहिये मुझे''[1] इसी अंक में एस. पी. सतर्कता तथा आयकर अधिकारी का नेता के कक्ष में प्रवेश होता है, वे दोनों अधिकारी उसे जाँच में सहयोग करने के लिये कहते हैं और इस छापे में उसकी कोठी से अनेक दस्तावेज जब्त होने की बात सामने आती है। नाटक के अंतिम पाँचवे अंक में नेता के खिलाफ युवा कार्यकर्ताओं का आक्रोश भड़कने, कुछ जमीन आदि कब्जा में जैसी नेता की अनेक चारित्रिक दुर्बलताएँ इस अंक का मुख्य हिस्सा हैं। तभी नेता का पालित पुलिस दरोगा नेता के फार्म हाउस में नेता के पुत्र तथा नेता पुत्र के मित्रों की रंगीन मिजाजी तथा व्यभिचारी चरित्र के संबंध में सूचना मिलती है, इस काण्ड में घातक नशा करने से नेता के पुत्र का एक मित्र मर जाता है तथा यहाँ से कुछ लड़कियाँ गायब होने की सूचना भी मिलती है। फार्म हाउस से पुलिस को शराब की बोतलें, जनानी चड्डियाँ, ब्रेसियरीज, कुछ खाने–पीने की चीजें और एक अधजला पाँच सौ रुपए का नोट मिला है। पता चलता है कि नेता पुत्र ने उसकी सिगार बनाकर सुट्टे मारे थे।''[2] दरोगा के साथ नेता इस काण्ड के हीरो अपने अस्पताल में भर्ती अपने पुत्र को देखने चल देते हैं और यही नाटक समाप्त हो जाता है।

सुप्रसिद्ध साहित्यकार पूर्व सांसद डॉ. रत्नाकर पाण्डे ने इस नाटक के संबंध में अपना अभिमत प्रेषित कर लिखा था– ''समाज के विभिन्न वर्गों पर जिस व्यंग्यात्मक शैली में आप लेखन करते हैं, वह

---

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, नेताजी, पृष्ठ 64
[2] वही, पृष्ठ 71

आपकी अपनी गहन आत्मविश्लेषणात्मक दृष्टि का द्योतक है। व्यंग्य वही लिख सकता है, जो अपने पर हँसना जानता हो और आपकी कमी को उजागर करने वाला हो। नेताओं के विषय में प्रचलित आम धारणा अच्छी नहीं है। इस धारणा का नाटकीय विश्लेषण करने में आप सफल रहे हैं।''[1] ऐसे ही एक पत्र में साहित्यकार डॉ. आर.वी. भण्डारकर ने अपनी समीक्षात्मक टिप्पणी में लिखा था– ''समाज में जब चहुँओर नैतिक ह्रास पाँव पसार रहा है, अशिव को ही जब शिव मानने की प्रवृत्ति विकसित हो रही है, सौन्दर्य की परिभाषा ही बदल गयी है, ह्रास को ही विकास मान लिया गया है, सत्य एक कोने में छिपने के लिये मजबूर है– ''ऐसे में 'नेताजी' जैसे व्यंग्य नाटक समाज का ध्यान 'सत्य' की और खींचने में निश्चय ही अहम भूमिका निभाएँगे। दृश्यकाव्य का प्रभाव सर्वज्ञात है। 'नेताजी' में अभिनेयता हैं। अतः इसकी रंगमंच प्रस्तुति निःसन्देह और अधिक प्रभावकारी होगी। नाटक में गति है, प्रभाव है। संवाद छोटे हैं, जो नाट्यानुकूल हैं। आज के युग में जब सभी कटु सत्य से जी चुराते हैं, तब डॉ. कुष्ण मुरारी शर्मा का यह प्रयास स्तुत्य है। देर भले ही लगे, लेकिन हमारे मनीषी इसी तरह हमें सजग करते रहे, तो समाज चेतेगा अवश्य।''[2] देश के पूर्व प्रधानमंत्री वरिष्ठ साहित्यकार श्री अटल विहारी बाजपेयी जी की ओर से उनके सचिव श्री एन.सी. झींगटा ने भी 'नेताजी' को एक सफल नाट्य कृति बतलाते हुए नाटककार को बधाई प्रेषित की थी।''[3]

नाटक मंचन की दृष्टि से पूर्ण सफल माना गया है, प्रस्तुत नाटक की समीक्षा करते हुए नाट्य रंग विशेषज्ञ ने अपनी समीक्षा में

---

[1] नाटककार को दिनांक 12 सितम्बर सन् 2007 को लिखित व्यक्तिगत पत्र से
[2] नाटककार को लिखित 27 अगस्त 2007 के पत्र से
[3] नाटककार को लिखित 16 अगस्त सन् 2007 को प्रेषित पत्र से।

लिखा था– ''वर्तमान में नाट्य मंचन के लिये रंगमंच पर एक साथ अनेक दृश्यों के नाटकों में देखे जाते हैं। नेताजी ऐसे प्रयोगों से अछूता हैं, यहाँ नाटककार डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा ने पाश्चात्य नाट्य सिद्धान्तों का निर्वाह सफलता पूर्वक किया हैं। नेताजी में एक देश एक काल और एक वातावरण – यदि संकलनत्रय का सफल प्रयोग हुआ है। नाटक में संपूर्ण वातावरण पूर्णतः राजनीति के जो नाटक के पाँचों अंकों में विद्यमान रहता है। एक ही स्थान– नेताजी की बैठक का कक्ष है, जहाँ ढाई–तीन दिन के समय में सब कुछ घटित होता है। प्रस्तुत नाटक को यही संकलनत्रय अधिक प्रभावशाली बनाता है, नाटक के पात्र – नेताजी, पत्रकार, दरोगा, ग्रामीण किसान, श्यामा, पार्टी के युवा कार्यकर्ता इत्यादि है, जिन्होंने स्थति–परिस्थिति तथा मनःस्थिति के अनुसार भावों और भाव भंगिमाओ की अभिव्यक्ति की है। पात्रों की भंगिमाएँ, मुद्राएँ, चेष्ठाएँ, प्रसंग–सन्दर्भ, घटना–प्रघटना अनुसार है। तात्पर्य यह पात्र अपने मौलिक स्वरूप के प्रदर्शन में पूर्ण सफल है। नेताजी के संवाद चुश्त–दुरुस्त, भाव–विचार, प्रयोजन और पात्रों परिस्थितियों के अनुकूल हैं, जो कथा को गति तथा जीवन्तता प्रदान करते हैं।''[1] मासिक 'भाग्य दर्पण' के संपादक डॉ. इकबाल अहमद मंसूरी ने प्रस्तुत नाटक को– ''आज की भृष्ट राजनीति का सजीव दर्पण कहा है।''[2]

'अयोध्या संवाद' के संपादक श्री शरद शर्मा ने भी नेताजी नाटक को– ''राजनीति प्रदूषण की जीवन्त कृति कहा है।''[3]

समीक्ष्य नाटक डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा के व्यंग्यात्मक नाटकों में एक विशेष महत्व रखता है, प्रस्तुत नाटक व्यक्ति चरित्र की उज्जवलतम

---

[1] त्रैमिासिक साहित्य परिक्रमा अंक 3, अक्टूबर से दिसम्बर सन् 2007, पृष्ठ 57
[2] भाग्य दर्पण, मासिक, खजुरिया– खीरी (उ.प्र.), पृष्ठ 23
[3] अयोध्या सम्वाद, अयोध्या दिनांक 30 अगस्त से 5 सितम्बर 2005, पृष्ठ 7

अपेक्षाओं के साथ ही वर्तमान सामाजिक, राजनीतिक परिदृश्य को परिष्कृत करने की साहित्यकार की अकुलाहट का मूर्त रूप है, निश्चय ही प्रस्तुत नाटक सामाजिक, राजनीतिक चेतना के प्रसार में महती भूमिका निभा सकता है।

vkt dk Jo.k dqekj ¼ukVd] lu 2009½

'आज का श्रवण कुमार' सामाजिक समस्या प्रधान नाटक है। प्रस्तुत नाटक में वर्तमान समाज की एक ऐसी ज्वलंत समस्या की ओर नाटककार ने ध्यान आकृिष्ट किया है, जो आज की एक कठिन समस्या का रूप ले चुकी है। हमारी भारतीय संस्कृति में– हमारे सुसंस्कृत समाज में समाज के वयोवृद्धों को सदैव सम्मान का दर्जा प्राप्त रहा है। वृद्धावस्था में उन्हें न कभी निराश्रित छोड़ा गया है, और न कभी निदृत किया जाता रहा है। इसके विपरीत उन्हें समाज में अत्यन्त सम्माननीय मानकर उनकी सभी समस्याओं को प्राथमिकता के साथ निराकृत किया जाता रहा है। समाज उनके अनुभव की पूँजी से सदैव मार्गदर्शन लेता रहा है। इसके विपरीत आज भारतवर्ष जैसे सुसंस्कृति जैसे देश में भौतिकवाद के प्रभाव से तथा पाश्चात्य सभ्यता के अन्धानुकरण एवं अन्य दुष्प्रभावों के कारण हमारी यह वरिष्ठ पीढ़ी आज बहुत उपेक्षित सा अनुभव कर रही है। उसके साथ उसकी संततियों के द्वारा दुर्व्यवहार किया जाता है, उन्हें लांछित, प्रताड़ित किया जाता है तथा उनकी संपत्ति छीनकर उन्हें दर–दर भटकने के लिये विवश किया जाता है। इसी विषम समस्या के कारण आज देशभर में अनेक वृद्धाश्रम खोले गये हैं, सरकार भी नियम और व्यवस्थाएँ बनाकर उन्हें संरक्षण दे रही हैं, तथापि इस समस्या का अन्त दिखलाई नहीं पड़ता। दिनों दिन वृद्धाश्रमों की संख्या बढ़ रही है और समाज में ऐसे तिरष्कृत वृद्धों का एक बड़ी

संख्या में जहाँ–तहाँ दिखाई देना देश और समाज की एक बड़ी समस्या का रूप लेता जा रहा है। प्रस्तुत समस्या सामाजिक, सांस्कृतिक चेतना के अभाव तथा कुसंस्कारों के दुष्प्रभाव का परिणाम है। आज का श्रवण कुमार इसी सामाजिक समस्या की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट करता है।

भारतवर्ष जैसे सुसंस्कृत देश में जहाँ श्रीराम हुए हैं, श्रवण कुमार हुए हैं, शिवाजी महाराज हुए हैं और न जाने कितने रत्न इस भारत–भू पर उत्पन्न हुए हैं। जहाँ वृद्धाश्रम तथा नाइट सेल्टर्स की आश्यकता कभी उत्पन्न ही नहीं हुई माता–पिता का आज्ञाकारी होना भारतीय संतानों में सदैव अपने लिये गौरव का आदर्श माना है, इस देश की युवा पीढ़ी के प्रतिनिधि राम कहते हैं–

सुन जननी सोई सुत बड़ भागी।
जो पितु मातु चरन अनुरागी।।

उसी देश में आज इस विकट समस्या का उत्पन्न होना समाज शास्त्रियों के लिये विशेष चिन्ता का विषय है। दूसरी ओर आज के श्रवण कुमारों को देश की युवा संतानों को सुसंस्कार बनाना आज की एक अत्यन्त ज्वलन्त समस्या है।

'आज का श्रवण कुमार' नाटक इसी यथार्थपरक दृष्टि के आधार पर रचित है, प्रस्तुत नाटक के तीन अंक और मात्र छः दृश्य हैं। कथावस्तु एक दम सीधी सपाट है, संपूर्ण नाटक में श्रवण कुमार और उसकी पत्नी मोहिनी के चरित्रांकन द्वारा आज की कुसंस्कारित, मूल्य–भृष्ट कृतघ्न, युवा पीढ़ी के वृद्धजनों के प्रति अनुत्तरदाई व्यवहार और उसके दुष्परिणमों को समाज के सम्मुख प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। ''प्रस्तुत यथर्थ परक नाटक व्यंग्य ही नहीं, एक यथार्थ

है, जिसे आज के नालायक दिग्भ्रान्ति श्रवणकुमारों के कारण कई माता–पिताओं को भोगना पड़ रहा है।''[1]

प्रथम अंक में नाटक का मुख्य पात्र श्रवण और मोहिनी पारस्परिक वार्ता में कहते है– ''पैसे उनके दूध–मलाई हम मारते हैं।''[2]

इसी सूत्रवाक्य का इन दोनों के चरित्र में आदि से अन्त तक विकास होता दिखाया गया है, श्रवण के पिता प्रो. गुप्ता एक रिटायर्ड व्यक्ति हैं– वयोवृद्ध है। श्रवण की माँ शारदा भी एक वृद्धा माँ है, दोनों अपने पुत्र और पुत्रवधू को सही रास्ते पर लाने का हर संभव प्रयास करते हैं, दोनों को उन्होंने अपने प्रभाव से नौकरी भी दिलवा दी है, जहाँ से उन्हें नियमित वेतन भी मिलता है, जो उनके जेब खर्च के लिये पर्याप्त है, फिर भी ये बिगडैल संतानें अनाप–सनाप खर्चा करती हैं, चार सौ बीसी करती हैं, किसी–किसी को बाउन्स हुआ जाने वाले चैक भी दिया करते हैं, लोगों से माता–पिता के नाम पर रूपए भी उधार ले लते हैं, आलीशान होटलों में रुकते हैं और न जाने क्या–क्या ऐसे ही दुष्कृत्य करते हैं, सचमुच ये उनुत्तरदाई रवैया माता–पिता की गम्भीर चिन्ता का कारण है। माता–पिता उसकी ऐसी देनदारियाँ चुकाते रहते हैं, फिर भी समस्या जस की तस है। तब प्रो. गुप्ता दोनों से कहते हैं– ''..... तुम लोग ऐसा करते ही क्यों हो ? अब तुम लोग नासमझ बच्चे नहीं हो। सरकारी सेवा में हो। दो–दो तनख्वाएँ केवल सैर–सपाटे और मौज–मस्ती में बर्वाद कर देते हो और ऊपर जे..... मोहिनी इसका प्रतिवाद करती हुई कहती है, कि हम वही करते है जो जरूरी है। मौज मस्ती हम नहीं करते। इस पर प्रो. गुप्ता उसे झड़कते हुए

---

[1] डॉ. श्याम सुन्दर निगम – 'शोध–समवेत, उज्जैन अक्टूबर से दिसम्बर सन् 2009, पृ. 114
[2] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, आज का श्रवण कुमार, पृष्ठ 9

कहते हैं– ''चुप रहो दो–दो वेतन यों ही उड़ा देते हो। जरा सोचे अनेक लोग एक ही वेतन में तुमसे भी कम आमदनी में घर का सारा खर्चा चलाते हैं और कुछ बचत भी कर लेते हैं, जो आड़े वक्त में उनके काम आती है।''[1]

इस पर श्रवण अपने पिता को बुरा–भला कहता है और कहता है कि उनकी उस शाम का मजा उन्होंने किरकिरा ही कर दिया। सारा मूड़ खराब कर दिया। यथार्थतः श्रवण और मोहिनी शाम को क्लब जाते हैं, शराब पीते है। और जुआ खेलते हैं। नाटक के दृश्य दो मैं प्रो. गुप्ता और उनकी पत्नी शारदा परस्पर बात कर रहे हैं तभी आगरा से प्रो. गुप्ता के एक मित्र शर्मा जी का फोन आता है, जिससे पता चलता है कि आगरा में श्रवण और मोहिनी ने एक होटल का बीस हजार का बिल नहीं चुकाया और शर्मा जी से भी दस हजार रुपए माँग लाया। इसी दृश्य में प्रो. गुप्ता निम्न दोहे के माध्यम से अपनी वेदना व्यक्त करते हुए कहते हैं–

''नीयत समय पर खींचते, प्राणों को यमदूत।
तिल–तिल कर के नित्य ही, लेता प्राण कपूत।।''[2]

जहाँ तक मोहिनी के चरित्रांकन का प्रश्न है, इसे भी नाटककार ने अत्यन्त मनोवैज्ञानिक ढंग से उसके संवादों और व्यवहार से ऐसा शुद्ध कर दिया है, कि वह भी भारतीय नारी के उच्चादर्शों के नितान्त ही व्यवहार करने वाली है। नाटक के दूसरे अंकों में भी नाटक में इसी समस्या का पल्लवन किया है। संपूर्ण नाटक में प्रो. गुप्ता के इस कुपुत्र और उसी के रंग में रंगी–पंगी उसकी पुत्रवधु के चार सौ बीसी

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, आज का श्रवण कुमार, पृष्ठ 15
[2] वही, पृष्ठ 19

के ऐसे ही किस्सों की भरमार है, मोहिनी भी अपनी सास से ऊल–जलूल अपमान जनक बातें करती हैं, पुत्र तो दुर्व्यवहार करता ही है वह उनसे बदतमीजी से बोलता है। बार–बार अपमानित करता है, फिर भी दोनों माता और पिता उसको हर पल बचाते रहते हें, किन्तु नाटक के अंत में एक चार सौ बीसी के प्रसंग मे एक पुलिस दरोगा श्रवण को अपने साथ लेकर जाता है। इस अंतिम दृश्य में भी माँ का ममत्व छलक पड़ता है– वह प्रो. गुप्ता से आग्रह पूर्वक कहती है कि उस दरोगा से श्रवण को बचाइये, लेकिन प्रो. गुप्ता उसे शान्त करते हुए कहते हैं– ''शारदा कानून तो अपना काम करेगा ही।''[1]

समीक्षक डॉ. प्रमिला मजेजी विस्तृत समीक्षा में लिखती हैं– ''आज का श्रवण कुमार, नाटक जीवन स्तर को उठाने के लिये जो सूत्र वाक्य देता है, उनकी तार्किकता उन्हें अधिक प्रभावात्मक बना देती है। अधिकार की अपेक्षा कर्तव्य और दायित्वबोध की प्रेरणा देना नाटक का मूल प्रयोजन है। कम समयावधि में बड़े–छोटे सभी मंचों पर सफलता पूर्वक मंचित किया जा सकने वाला प्रस्तुत नाटक हर दृष्टि से श्रेष्ठ है।''[2]

वरिष्ठ साहित्यकार एवं समीक्षक डॉ. पूनम चन्द्र तिवारी नाटक की विस्तृत समीक्षा करते हुए लिखते है। यह नाटक परिवार और गृहस्थ जीवन की इकाईयों की टूटन की आवाज है। माँ बाप के प्रेम, त्याग और बच्चों के प्रति उनके उत्सर्ग को नकारने की नई पीढ़ी की विद्रोही झलक है। भारतीय परिवारों के बिखरने का खुलासा है। पाश्चात्य देशों में अधिकांश माँ–बाप नींद की गोलियाँ खाकर सोते हैं। पश्चिमी संस्कृति में परिवार की दशा मरघट जैसी है। बेटे शराबखानों में

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, आज का श्रवण कुमार, पृष्ठ 50
[2] त्रैमासिक 'लोकयज्ञ' बीड (महाराष्ट्र), जुलाई से सितम्बर, 2014 पृष्ठ 22

केबरे हाउस में या क्लबों में चले जाते हैं। वहाँ सैक्स का नंगापन अपनी चरम दशा तक पहुँचता है यह संस्कृति भारत की संस्कृति से नितान्त भिन्न है।'' 'आज का श्रवण कुमार' दो–दो दृश्यों वाले तीन अंकों का, बड़ी कसी बुनाई और भाषाई खुशबू में भीगा नाटक है। कुल पात्र आठ ही हैं– प्रो. गुप्ता बूढ़ी पत्नी शारदा, पुत्र श्रवण, पुत्रवधु मोहिनी, शारदा का भाई, राधेलाल, पड़ौसी, विश्वजीत और उनकी पत्नी सावित्री तथा पुलिस का दरोगा।.......... माँ–बाप की सेवा न करके उनहें बुड्ढा–बुड्ढी कहना, अपमान करना, भाषा में अबे–तबे के शब्दों में संबोधित करना, उपेक्षा करना, श्रवण कुमार का दुःखद आचरण है। उनकी उपेक्षा करना, आँखें तरेर कर बातें करना, श्रवण का रोज का काम है। बहू मोहिनी भी वृद्धा सास को ऐसे ही शब्दों से अपमानित करती है। ऐसे ही दुराचारी पुत्र और पुत्रवधु के चरित्र का दिग्दर्शन यह दर्पण कराता है। सचमुच जो एक श्रेष्ठ नाटक में चाहिये, वह सब कुछ प्रस्तुत नाटक में है।''[1] समीक्ष्य नाटक सामाजिक चेतना का उत्कृष्ट उदाहरण है। समाज की सबसे छोटी इकाई व्यक्ति होता है, कुछ व्यक्तियों के समूह से परिवार बनता है। इन दोनों स्तरों पर नाटककार ने व्यक्तिगत, चारित्रिक परिष्कार के प्रयास के लिये सभी को जागृत करने के साथ ही समाज में उपेक्षित वृद्धजनों के प्रति भी सभी सामाजिकों को सम्मानजनक व्यवहार करने और उनकी समस्याओं के समाधान के लिये सचेष्ट रहने का इस नाटक के माध्यम से जो सन्देश दिया है, वह निश्चय ही समाज और देश के लिये हितकर है।

ohjkxuk jkuh nqxkorh ¼ukVd] lu 2013½

[1] दैनिक नव भारत, ग्वालियर 4 सितम्बर सन् 2009

वीरांगना रानी दुर्गावती एक ऐतिहासिक नाटक है। प्रस्तुत नाटक में नाटककार ने वीरांगना रानी दुर्गावती के प्रेरक चरित्र को देश और समाज के समक्ष इस नाटक के माध्यम से पुर्नजीवित की भावना तथा देशानुराग उत्पन्न करने का प्रयास किया है। गौंडवाना की रानी दुर्गावती ने पति की मृत्यु के बाद राज्य संचालन का सूत्र अपने हाथों में संभाल लेती है, उसका पुत्र वीरनारायण अभी छोटा है। इसलिये उसे राज्य के उत्तराधिकारी वीरनारायण को संरक्षण उचित मार्गदर्शन और देशोचित प्रशिक्षण भी देना है। इस महत्वपूर्ण कार्य में इसके सभी मंत्री, सेना प्रमुख आदि उसके पूर्ण सहयोगी हैं, लेकिन तभी मुगल बादशाह अकबर की बिस्तारवादी आँख की वह किरकिरी बन जाती है, अकबर का पराधीनता स्वीकार कर लेने का सन्देश वह ठुकरा देती है इस कारण अकबर क्रुद्ध होकर अपनी विशाल वाहिनी को उसे कुचल देने का आदेश देता है। वीरांगना दुर्गावती अकबर की विशाल फौज तथा मुजफ्फर खाँ कमाल खाँ, सैयद आसफ खाँ जैसे अकबर की सेना के सूबेदारों और उसके तोपखानों का वीररांगना को मुकाबला करना पड़ता है, वह अपने वीर सैनिकों अधार सिंह, मुजफ्फर खाँ, मुबारक खाँ, तूग शम्स खाँ, अर्जुन दास, बैस, कुँवर कल्याण जैसे बहादुर सैनानियों के साथ डटकर मुगल सेना का अनेक मोर्चों पर पूरी वीरता के साथ डटकर मुकाबला करती है। भीषण युद्ध होता है और उस युद्ध में एक तीर रानी की आँख में लगता है। वैसे ही वह गम्भीर रूप से घायल है। इसी समय बारहा के समीप नर्रई नाला अचानक अप्रत्याशित रूप से उफान पर आ जाता है, कहीं से कोई भी मार्ग सुरक्षित निकल जाने के लिये दिखलाई नहीं पड़ता। वीरांगना की जुझारू सेना भी अपने तीर, तलवारों से मुगल सेना की तोपों के सामने पूरी तरह शक्तिहीन हो चुकी

है। ऐसे कठिन समय में वह अपने अत्यन्त विश्वासपात्र दीवान अधार सिह से आग्रह करती है कि मैं जीवित या मृत किसी भी रूप में शत्रु के हाथों में नहीं आना चाहती वह अधार सिंह से प्रार्थना के स्वर में सहायता की याचना करती है उसके शब्द देखें– ''मैं स्वतंत्र गोंडवाना में ही स्वतंत्रता पूर्वक अंतिम स्वास लेना चाहती हूँ। स्वदेश के लिये (कराह) ही यह दुर्गावती जीवित रही पर अब..... (कराहती है) और तभी बिजली की गति से अपनी कटार निकालकर एक झटके में अपने वक्ष में घौंप लेती है और 'जय स्वदेश जय मातृभूमि'' कहकर वहीं लुढ़क जाती हैं।''[1] देश पर अपने प्राण न्यौछावर करने से पहले वह अधार सिंह से विनम्र निवेदन करती है कि गौंडवाना के सम्मान और मेरी इज्जत की रक्षा के लिये आप अपनी तलवार से मुझे वीरगति प्रदान कर दें।''[2] किन्तु अधार सिंह किसी भी स्थिति में इस आज्ञा के पालन में अपने आपको जब तैयार नहीं होता, तब वीरांगना दुर्गावती को देश की बलि वेदी पर अपना प्राणोत्कर्ष अपनी ही कटार से करना पड़ता है। यहीं इस चरम बिन्दु पर पहुँचकर नाटक समाप्त हो जाता है।

प्रस्तुत नाटक की रचना का प्रयोजन 'वीरांगना दुर्गावती की प्रजावत्सलत, न्यायप्रियता, वीरता, निर्भीकता, रणकौशल, धर्मपरायणता, विद्वजनों के प्रति सज्जनभाव, असहायों, निर्धनों, वृद्धों की सहायता, शासन संचालन में निपुणता, शौर्य, पराक्रम आदि अनुकरणीय गुणों को देश और समाज के समक्ष लाने का प्रयास ही इस नाटक का एकमात्र प्रयोजन है।

नाटक का कथानक चार अंकों में विभक्त है और कथा का प्रभाव कहीं भी उलझा हुआ नहीं है, मुख्य कथा सीधे–सीधे क्षिप्रगति से

---

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, वीरांगना रानी दुर्गावती, पृष्ठ 32
[2] वही, पृष्ठ 31

चर्मबिन्दु की ओर अग्रसर होती है। पताका प्रकरी जैसी उपकाथाएँ नाटक में नहीं हैं। नाटक के पात्र भी ऐतिहासिक हैं और अपने–अपने दायित्वों का पूर्णतः नाटकीय ढंग से निर्वाहन करते हैं। चरित्र–चित्रण की दृष्टि से भी देखा जाए तो नाटक पूरी तरह सफल रहा है, नाटककार का मूल प्रयोजन तो वीरांगना दुर्गावती के शौर्य, पराक्रम, स्वाभिमान और राष्ट्रप्रेम को उद्घाटित कर राष्ट्रीय चेतना जागृत करना ही है, लेकिन अन्य पात्रों में चरित्रांकन में भी नाटककार को पूरी सफलता मिली है, नाटक शिल्प की दृष्टि से भी बहुत सुगठित है, किन्त प्रवाहपूर्ण है।

नाटक के संवाद एकदम सीधे, सरल तथा देश काल एवं परिस्थितियों के अनुकूल हैं। मुगल बादशाह के पक्ष के पात्र उर्दू मिश्रित हिन्दुस्तानी का प्रयोग करते हें, जबकि वीरांगना दुर्गावती के पक्ष के सभी पात्र सरल हिंदी भाषी हैं। डॉ. प्रमिला मजेजी के अनुसार– ''लघु कलेवर वाले प्रस्तुत नाटक का मूल स्वर राष्ट्रवादी है।''[1] वीरांगना दुर्गावती के पक्ष के सभी वीर राष्ट्र के लिये सर्वस्व न्यौछावर करने और वीरांगना के निर्देशों का पूर्ण संर्पण भाव से पालन करने के लिये सदैव उपस्थित रहते हैं। नाटककार ने इसी राष्ट्रप्रेम की भावना का जन–जन तक सन्देश पहुँचाने का काम किया है।

प्रस्तुत नाटक के सन्दर्भ में अपनी विस्तृत समीक्षा में डॉ. कामिनी ने लिखा है– ''देश की आजादी के दिये प्राणों का उत्सर्ग करने वाली, गौंडवाना की रानी दुर्गावती की गौरव गाथा को प्रस्तुत करना ही नाटककार का प्रमुख उद्देश्य है। प्रारम्भ से ही नाटक प्रभावित करता है। आन्दोलित करता है, दिलो–दिमाग को बदलने की ताकत रखता है। राष्ट्र–प्रेम की भावना से लवरेज यह नाटक एक नई शक्ति का संचार

[1] मासिक शुभ तारिका, अप्रैल सन् 2014, पृष्ठ 9

करने में सक्षम है। नाटक की प्रकृति राष्ट्रीय अन्वेष की है। राष्ट्रीयता एक भावना है, जज्बा है, जहाँ समग्र राष्ट्र के गुणगान का भाव है, राष्ट्रीयता एक प्रतिकम्पन्नकारी ऊर्जा हैं अनुगूँज है, संर्पण हैं, त्याग है, समग्र भूगोल, इतिहास, संस्कृति और जन–जीवन की झाँकी रूपायित होती है। राष्ट्रीयता में देश सर्वोपरित है और देश के लिये मर मिटना ही परमपद को प्राप्त करना है।''[1]

आपने आगे लिखा है– ''कठिन परीक्षा की घड़ी में रानी घबराती नहीं है। नाटककार मूलतः कवि है, इसलिये उनके गीत कथानक की सुन्दरता को द्विगुणित कर देते हैं –

सबके लिये जिए वह जीवन है,
सबके लिये मरे वह जीवन है।
साँस–साँस अर्पित जिसकी देश को,
भले जिए पल–दो पल वह जीवन है।

प्रस्तुत नाटक ऐतिहासिकता और देश भक्ति से परिपूर्ण है। नाटक, अस्तित्व, अस्मिता और आस्था का साक्षी है।''[2]

वीरांगना रानी दुर्गावती राष्ट्रीय चेतना, वीरता और देश के लिये सर्वस्व संर्पण की शंख ध्वनि है। प्रस्तुत नाटक रचना कौशल तथा राष्ट्र प्रेम के सन्देश से प्रभावित होकर चन्द्रपुर (महाराष्ट्र) की सुप्रसिद्ध लेखिका डॉ. (श्रीमती) बानो सरताज ने उर्दू भाषा में उर्दूभाषी देशवासियों के लिये इसका तजुर्मा (अनुवाद) किया है, जो उनके नाट्य संग्रह 'घर वापसी' का 'तबील सफर' में अन्य कुछ नाटकों के साथ

[1] दैनिक आचरण, ग्वालियर, 25 अगस्त 2013
[2] वही

प्रकाशित हुआ है, वीरांगना दुर्गावती नाटक की सफलता का जिसे एक प्रमाण माना जा सकता है।

प्रो. अच्छे लाल (अप्रकाशित)

प्रो. अच्छे लाल प्रो. कृष्णमुरारी शर्मा का एक अप्रकाशित नाटक है। यह नाटक भी व्यंग्य प्रधान है। प्रस्तुत नाटक का कथानायक प्रो. अच्छे लाल है, यह नाम प्रतीकात्मक है। नाटककार ने प्रो. अच्छे लाल के रूप में एक ऐसे प्रो. को प्रस्तुत किया है, जो 'नाम बड़े और दर्शन थोड़े' की कहावत को चरितार्थ करता है। इस प्रो. के चरित्र में अच्छे के बजाय सब कुछ बुरा ही बुरा है। वह न तो स्वयं अध्ययनशील है और न ही अध्यापन में ही उसकी रुचि है। वह छात्रों की राजनीति में तो सक्रिय रूप से भाग लेता ही है, इसके अतिरिक्त राजनेताओं से भी गहरे संबंध बनाकर रखता है। महाविद्यालय के बदमाश और बदनाम छात्रों को पटाकर रखता है तथा उनसे अच्छे चरित्रवान, प्राध्यापकों को आतंकित भी कराता रहता है, महाविद्यालय के प्राचार्य तक उससे कुछ कहने का साहस नहीं जुटा पाते, वह तिकड़म बाज भी है, और अनेक अनुचित तरीकों से धनार्जन करने में भी उसकी विशेष रुचि है। देश भर के विश्वविद्यालयों से उसने अपने तार जोड़ रखे हैं, यहाँ–वहाँ से परीक्षा की उत्तर पुस्तिकाएँ कवाड़ना और उन्हें जैसे–तैसे स्वयं व अपने पाले हुए विद्यार्थियों से जँचवाना उसका प्रमुख काम है।

अपने विषय की कॉपियाँ तो उसके पास आती ही हैं, सांठ–गांठ करके अन्य विषयों की कॉपियाँ भी वह कबाड़ लेता है। रंगीले मिजाज का है। कुछ छात्राओं के साथ भी उसके अनुचित संबंध भी चर्चा में रहते है।, वह पीएच.डी. की थीसिस तक भी संबंधित से धन लेकर, कैसे भी लिख–लिखा कर तैयार कर देता है। मदिरापान करता

है, सिगरेट, पान, तम्बाकू का भी शौकीन है। सभी तरह के लटके–झटके उसे खूब आते हैं। इन्हीं सब चारित्रिक विशेषताओं को उजागर करके नाटककार ने ऐसे घृणास्पद लोगों को समाज में आगाह करने का काम प्रस्तुत नाटक के माध्यम से किया है। नाटक की कथा चर्मबिन्दु पर जब पहुँचती है तब वह छात्रों की उत्तर पुस्तिकाओं में छात्रों से मोटी रकम लेकर उनके अंक बढ़ाने के अपराध में रंगे हाथों पकड़ा जाता है और यहीं नाटक समाप्त हो जाता है।

प्रस्तुत नाटक की कथावस्तु अधिक लम्बी नहीं है, कथा धारा सीधी और सरल है, नाटककार यहाँ शिक्षा जगत में कैसे भी प्रवेश पा गये ऐसे लोगों से समाज को सावधान करना चाहता है, शिक्षा जैसे पवित्र व्यवसाय में घुसपैठ कर जमे ऐसे लोगों की संख्या अब बढ़ती ही जा रही है। ऐसे कलुषित चरित्र के लेागों को इस पवित्र सेवा से अलग–करने की महती आवश्यकता की ओर समाज का ध्यान आकृष्ट करना प्रस्तुत नाटक का मूल प्रयोजन है।

नाटक के पात्र लगभग एक दर्जन हैं, जिनमें प्रो. अच्छे लाल के पालतू चार छात्र भी सम्मिलित हैं, प्राचार्य के अतिरिक्त एक–दो सहकर्मी, प्राध्यापक, पुलिस दरोगा और एक सिपाई भी नाटक का पात्र है, सभी पात्रों का लक्ष्य अपने संवादों तथा कार्यकलापों के माध्यम से प्रो. अच्छे लाल का यथार्थ चित्रण समाज के सम्मुख लाना ही मूल उद्‌देश्य है और इस कार्य में वे अपने आचरण तथा व्यवहार से भी पूर्ण सफल रहे हैं।

नाटक प्रभावशाली इसलिये भी बन पड़ा है, क्योंकि इसके संवाद पूरी तरह पात्रानुकूल हैं। छात्रों के बीच जैसी बातचीत होती है–

उनके लहजे और भंगिमाओं ने भी मूर्त रूप देने में नाटककार को सफलता मिली है, सभी पात्रों का चरित्र चित्रण स्वाभाविक ढंग से हुआ है।

देश और समाज में शिक्षा का सर्वोच्च स्थान है और शिक्षा प्रदाता शिक्षक को भी समाज में वन्दनीय माना गया है। गुरुओं के प्रति आदरभाव इस देश की पहचान है, मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम, लीला पुरुषोत्तम यदुनन्दन श्रीकृष्ण, धर्मराज युधिष्ठिर, धनुर्धर अर्जुन, महाबली भीम जैसे महापराक्रमी योद्धाओं, वीरों सभी ने अपने शिक्षकों को सदैव यथोचित मान दिया है। वीर शिवाजी, विवेकानन्द तथा अन्य सभी राष्ट्र भक्तों की गुरु भक्ति कभी भुलाई नहीं जा सकती। महात्मा कबीर ने भी तो गोविन्द से अधिक गुरु को महत्व दिया है, गुरु ही शिष्यो का सच्चा भविष्य निर्माता होता है। उनका मार्गदर्शक होता है, स्वामी सत्यमित्रानन्द गिरि जी के अनुसार वह मोमबर्तिक के समान स्वयं गल–गल कर, जल–जलकर प्रकाश बाँटता है– वह ज्ञान का, प्रकाश का स्वयं पर्याय है, ऐसी मान्यताओं वाले देश में यदि कोई शिक्षक कदाचारी, धन लोलुप और पथभृष्ट है, तो इससे गम्भीर चिन्ताजनक बात और कुछ नहीं हो सकती यही विचार प्रस्तुत नाटक की मूल संवेदना है।

¼c½ leh{kk @ thouh %&

e`xu;uh & ,d v/;;u ¼leh{kk] lu 1969½ &

मृगनयनी एक अध्ययन लेखक की एक गद्य कृति है, इसमें लेखक ने डॉ. वृन्दावन लाल वर्मा के ऐतिहासिक उपन्यास मृगनयनी की संक्षिप्त व्यवसायिक समीक्षा प्रस्तुत की है, सन् 1967 में जीवाजी विश्वविद्यालय के द्वितीय वर्ष के सामान्य हिंदी के पाठ्यक्रम में डॉ. वर्मा का यह उपन्यास अध्ययन के लिये जब स्वीकृत हुआ, तब विद्यार्थियों को

पढ़ने के लिये कोई सहायक समीक्षा उपलब्ध नहीं थी, उन दिनों जो बड़ी–बड़ी समीक्षाएँ उपलब्ध थीं उनका मूल्य अधिक या मात्र लगभग दस अंकों के प्रश्नों के लिये बड़ी तथा कीमती पुस्तकें खरीदना, विद्यार्थियों की बड़ी कठिनाई थी। छात्रों के निवेदन को मानकर डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा ने यह संक्षिप्त समीक्षा प्रस्तुत की, जिसे भिण्ड के एक प्रकाशक ने सन् 1967 में प्रकाशित किया था। यह गद्य कृति पूर्णतः छात्र उपयोगी है, इस पुस्तक में उपन्यास के संक्षिप्त कथानक के अतिरिक्त प्रमुख पात्रों का चरित्र चित्रण मुख्य घटनाओं का विवरण तथा कुछ अन्य परीक्षा के लिये उपयेागी सामग्री भी प्रस्तुत पुस्तक में पढ़ने को मिलती है। लेखक की इस पुस्तक का शोध के लिये स्वीकृत विषय से कोई प्रत्यक्ष संबंध नहीं है, सामान्य जानकारी के लिये ही इस पुस्तक के संबंध में सामान्य चर्चा यहाँ की गयी है।

fgnh O;X; d 'kh"k i#"k i- gjh'kdj 'kek ¼lu 2005½&

पं. हरिशंकर शर्मा को आधुनिक हिंदी व्यंग्य के शीर्ष पुरुष के रूप में प्रस्तुत करने वाली यह पुस्तक जिसका शीर्षक है– ''हिंदी व्यंग्य के शीर्ष पुरुष स्व. पं. हरि शंकर शर्मा का लोकार्पण दिनांक 19. मई सन् 2005 को भारत माता मन्दिर, हरिद्वार में श्रीमद्भागवत कथा के पुनीत अवसर पर हजारों श्रद्धालुओं की उपस्थिति में अपने प्रवचन से पूर्व विश्व प्रसिद्ध संत, चिन्तक, प्रचनकार साहित्यकार स्वामी सत्यमित्रानन्द गिरि जी ने डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा की प्रस्तुत पुस्तक का विमोचन करते हुए कहा था कि स्व. पं. हरि शंकर शर्मा वर्तमान हिंदी साहित्य जगत के ऐसे व्यंग्यकार हैं, जिनके व्यंग्यों में कहीं भी फुहड़पन नहीं है तथा उनके व्यंग्य ही नहीं अन्य साहित्य में भी सुधारक क्षमता विद्यमान है, क्योंकि पंडित जी भारतीय आर्य समाज के शीर्ष नेताओं में

थे। भारत और भारतीयता में स्व. पंडित जी की अविचल आस्था थी और उन्होंने जो मूल्यपरक साहित्य जो समाज को दिया, उसमें नैतिक जागरण की अपूर्ण क्षमता है।''[1]

हिंदी व्यंग्य के शीर्ष पुरुष स्व. पं. हरि शंकर शर्मा पर केन्द्रित प्रस्तुत ग्रन्थ में दो खण्डों में लेखक ने पंडित जी के संबंध में अपने विचार प्रस्तुत किये हैं। प्रथम खण्ड में पंडित जी का जीवन वृत्तान्त संक्षेप में प्रस्तुत किया गया है, जबकि व्यंग्यकार पंडित जी शीर्ष द्वितीय खण्ड में प्रो. शर्मा ने सर्वप्रथम हिंदी व्यंग्य परम्परा का उल्लेख किया है और फिर क्रमशः व्यंग्यकार पंडित हरि शंकर शर्मा के विभिन्न प्रकार के व्यंग्यों की युक्ति–युक्त व्यंग्यों की समीक्षात्मक चर्चा की गयी है, डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा ने पुस्तक के आरम्भ में महान साहित्यकार पंडित हरि शंकर शर्मा का साहित्य जगत में जो अन्य कम महत्व है, उसकी चर्चा करते हुए प्रस्तुत पुस्तक के लेखन की आवश्यकता क्यों पड़ी ? इस तथ्य की जानकारी देते हुए लिखा है कि हिंदी साहित्य के इतिहासकारों तथा समीक्षकों ने पंडित जी की कृतियों का तटस्थ दृष्टि से मूल्यांकन नहीं किया है और इस कारण पंडित जी के उत्कृष्ट कृतित्व का सम्यक् मूल्यांकन भी नहीं हुआ है। जहाँ तक हिंदी हास्य व्यंग्य का प्रश्न है प्रो. शर्मा लिखते हैं– आज हास्य व्यंग्य के नाम पर उपलब्ध प्रायः सभी माध्यमों से जैसा कूड़ा–करकट यहाँ से वहाँ तक सर्वत्र बिखेरा जा रहा है, वह किसी से छिपा नहीं है। हास्य व्यंग्य साहित्य को आज मनोरंजन का मात्र एक सस्ता साधन मान लिया गया है। साहित्य के मुख्य प्रयोजन को भूलकर हँसा–हँसा कर लोट–पोट कर देने को ही आज के कथित हास्य रसाचार्यों ने अपना एकमात्र लक्ष्य ंधिारित कर रखा है और उसे ही वे अपनी सफलता का

[1] मासिक 'समन्वय साधन पथ', संयुक्तांक, जून–जुलाई, सन् 2005, पृष्ठ 55

मानदण्ड भी मान बैठे हैं, भले ही इसके लिये उन्हें सार्वजनिक रूप से अपनी पत्नी को ही आलम्बन क्यों न करना पड़े। इसी प्रयोजन से आज के प्रायः सभी मंचों से पत्नी–पुराण, सासु–बत्तीसी, ससुर चालीसा, तक पढ़े जाया करते हैं। सर्कस के जोकरों के समान ऐसे निम्नस्तरीय हास्य व्यंग्य की सचेष्ट सृष्टि के लिये आज जैसे हथकण्डे अपनाए जाते हैं। उनसे साहित्य तथा संस्कृति का अहित ही हो रहा है। ऐसे कठिन समय में पं. हरिशंकर शर्मा जैसे श्रेष्ठ हास्य व्यंग्यकारों का महत्व स्वतः ही बढ़ जाता है।''[1]

स्व. पं. हरिशंकर शर्मा के पूज्य पिता श्री स्व. पं. नाथूराम शंकर (शंकर) भी भारतेन्दु युग के एक महत्वपूर्ण महाकवि थे, उनके सुपुत्र श्री हरिशंकर शर्मा ने उनसे ही प्राप्त संस्कारों और विश्वासों से अपनी लेखनी को जहाँ–तहाँ सशक्त रूप से अभिव्यक्ती दी है। पंडित हरिशंकर जी को आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने एक श्रेष्ठ व्यंग्यकार मानते हुए लिखा है– ''अम्बिका दत्त व्यास और रुद्रदत्त के बाद हास्य–रसालिप्त लेख लिखने वाले का अभाव सा हो रहा था। अन्नपूर्णानन्द और हरिशंकर शर्मा ने उसकी पूर्ति कर दी। हरिशंकर जी की कृतियाँ अनेक दृष्टियों से अनमोल हैं।'' पंडित जी का व्यंग्यात्मक हास्य पाठक का मनोरंजन ही करता है और उसे सही दिशा में सोचने के लिये भी प्रेरित करता है वह सस्ता चालू और घटिया प्रकार का हास्य नहीं है, वह पूर्णतः स्वस्थ हास्य है, जो हृदय और मस्तिष्क के लिये स्वास्थ्य वर्द्धक तथा स्फूर्तिदायक है। इन्हीं विशेषताओं के कारण कथा सम्राट स्व. प्रेमचन्द्र जी ने पंडित जी को व्यंग्य और हास्य का आचार्य मान्य किया था।''[2]

---

[1] हिन्दी व्यंग्य के शीर्ष पुरुष पं. हरि शंकर शर्मा – 'निवेदन' से
[2] हिन्दी व्यंग्य के शीर्ष पुरुष पं. हरि शंकर शर्मा – 'निवेदन', पृष्ठ 376

हास्य व्यंग्य साहित्य का सृजन पंडित हरिशंकर शर्मा ने विनोदानन्द, घसीटानन्द, गड़बड़ानन्द आदि छद्मनामों से ही किया है, इसकी पुष्टि करते हुए, स्व. पंडित जी लिखते हैं– ''व्यंग्य विनोद संबंधी बातें लिखने की और मेरी प्रारम्भ से ही प्रवृत्ति रही है। पहले–पहल मैंने 'विनोदान्नद' के कल्पित नाम से 'विनोद बिन्दु' लिखने शुरु किये थे। इनमें प्रचलित प्रसंगों पर छोटे–छोटे विनोदात्मक लेख रहते हैं 'फिर सजीव पुस्तकों की अजीव आलोचना' शीर्षक के नीचे सजीव और जीते जागते विशिष्ट व्यक्तियों को पुस्तक मानकर, उनकी अजीब आलोचनाएँ कीं। यह बात 1923 की है।''[1]

पंडित जी के इस प्रकार के हास्य व्यंग्य उनकी कृतियों, चिड़ियाघर, पिंजरापोल, मन की मौज, गड़बड़ गोष्ठी तथा मटकाराम, मिश्र आदि में संकलित है। आपके हास्य व्यंग्य से ओतप्रोत कविता, कहानी, काव्य विडम्बना, निबंध, प्रह्यसन, एकांकी इत्यादि साहित्य की विविध विधाओं में देखने को मिलते हैं, आपके हास्य व्यंग्यों की विशेषता बतलाते हुए प्रख्यात साहित्यकार डॉ. हरिहर नाथ टण्डन ने उचित ही लिखा है– ''आपके हास्य रस की विशेषता यह है कि इसमें शिष्टता का पूरा ध्यान रखा गया है, कोई ऐसी बात नहीं लिखी गयी है, जिससे किसी व्यक्ति विशेष को कष्ट पहुँचे। या उसका अपमान हो। 'चिड़ियाघर' के प्रकाशित होने के पश्चात् यदि इनके लेखों को मैंने स्वयं डॉ. काशी प्रसाद जायसवाल को एक रेल यात्रा में सुनाया, तो उनके मुँह से निकल पड़ा– Humour that which strikes, but does not hurt" अर्थात् व्यंग्य वह है, जो चोट तो करे, पर उससे कष्ट न मिले'' शर्मा जी के सफल हास्य व्यंग्य की दूसरी आलोचना मुझे अभी तक नहीं

[1] वही, पृष्ठ 3

मिली है। उनके लेख बेदाग निशाने पर चोट करते हैं। पंडित जी ने राजनीतिक व्यंग्यों तथा सामाजिक व्यंग्यों में समाज एवं राजनीति में प्रचलित अनेक विद्रूपताओं पर बड़े सधे हुए व्यंग्य लिखे हैं। सामाजिक व्यंग्यों में सामाजिक, असमानता, भ्रष्टाचार, अंधरुढ़ियों, परम्पराओं, मिथ्याडंबर तथा दिखावटीपन पर बड़े तीक्ष्ण व्यंग्य किये हैं। पंडित जी के काल में अनमोल विवाह भी बहुत होते थे। कभी कोई बुड्ढा धन के बल पर किसी गरीब की अल्पवय कन्या को क्रय कर लाता तो कभी दूसरे हथकण्डों से अपना विवाह रचवा लेता 'चपरपंच' के चीत्कार में किस और तीक्ष्ण कटाक्ष है देखें–

नहीं हानि यदि गात गर्दन हिले,
करो ब्याह यदि बाल–बाला मिले।
न छोड़ो, अरे, थैलियाँ खोल दो,
वधू को वरो, स्वर्ण से तोल दो।[1]

सुप्रसिद्ध समीक्षक डॉ. पद्म सिंह शर्मा (कमलेश) ने पंडित जी के ऐसे व्यंग्यों के विनय में उचित ही लिखा है– ''हास्य उनके लिये बैठे–ठाड़े का मन बहलाव नहीं वह एक साधना पूर्ण लेखन था, जिसे वे मनुष्य की पाथ्विक वृत्तियों के परिमार्जन के लिये अस्त्र की भाँति उपयेाग मे ंलाते थे।''[2] सामाजिक चेतना के साथ ही आध्यात्मिक और धार्मिक क्षेत्र में फैले कुसंस्कारों, आडम्बरों, अन्य विश्वासों, दिखावटी उपासना पद्धतियों से लेकर चीख–चीखकर संकीर्तन करना तिलक छाप लगा लेना, गेरुऐ वस्त्र धारण कर लेना इत्यादि को पंडित जी ने ढोंग ही निरुपित किया

[1] चिड़ियाघर, सप्तम संस्करण, हरिशंकर शर्मा, पृष्ठ 7
[2] मासिक 'ज्ञानोदय' दिल्ली, मई, सन् 1968 'हास्य रसाचार्य हरिशंकर शर्मा, लेखक डॉ. पद्म सिंह शर्मा (कमलेश), पृष्ठ 21

है, धार्मिक, मिथ्याडम्बरों का आपने जहाँ भी अवसर मिला है, आपने व्यंग्य किया है, 'हर गंगा' की अग्रलिखित पंक्तियाँ देखिए–

''धर्म कर्म धू–धू धिक्कार,
दीन और ईमान विसार।
बेईमानी का आधार,
बना मुक्ति का सुन्दर द्वार।।
–हरिगंगा[1]

इस प्रकार के सैंकड़ों मूल्यवान व्यंग्य आपके अनेक निबंध संग्रहों में पढ़े जा सकते हैं।

डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा की समीक्ष्य पुस्तक की समीक्षा करते हुए प्रो. डॉ. प्रमिला मजेजी ने लिखा है– ''छपने के लिये लिखना और लिख कर छप जाने में ही जहाँ लेखक बनने की इच्छा को तृप्ति मिलने लगी हो, तमाम मानवीय गुण को ताक पर रखकर मनुष्य जहाँ बुद्धिजीवी विकासशील और शिक्षित कहलानें चला हो, अपनी पहुँच और पहचान बनाने के लिये, जिसने अपनी पहचान को ही खो दिया हो, शब्दों का खिलवाड़ ही जहाँ साहित्य सृजन कहलाने लगा हो और जीवन के उत्कर्ष से कोई सरोकार न रखकर भी उन्नति की बात हो, भावों, विचारों, और कल्पनाओं की और साहित्य के लक्ष्य से दिन पर दिन अपरिचित होते चले जाने की स्थिति आपत्तिजनक और अशोभनीय न दिखाई दे तथा आने वाली पीढ़ी के लिये पचासों किताबों के बीच से साहित्य की एक सही कालजयी परिभाषा न निकल पाए, तो ऐसे समय में वे कृतियाँ मूल्यवान क्यों न कहलावें, जो जीवन को जीवन बनाए रखने वाले तत्वों से हमारी पहचान करवाती हैं। हिंदी व्यंग्य के शीर्ष

[1] गड़बड़ गोष्ठी, प्रथम संस्करण, पं. हरिशंकर शर्मा, पृष्ठ 128

पुरुष पं. हरिशंकर शर्मा कृति ऐसी है। अवधारणाओं और मान्यताओं की सार्थक खोज है, आचार्य डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा की यह पुस्तक आज के विद्यार्थी के लिये भ्रमित करने वाले चौराहे से दूर एक सुस्पष्ट मार्ग है, जहाँ से वह साहित्य के साथ–साथ जीवन को सुन्दर बनाने वाले वैधानिक ही नहीं वर्तमान समय में आवश्यक व्यवहारिक समाधानों को ही देखते हुए ही जीवन्त और क्रियाशील होकर सक्रीयता की सही दिशा में आगे बढ़ सकता है।''[1]

स्व. डॉ. हरिशंकर शर्मा प्रखर राष्ट्रवादी थे। माँ भारती के अनन्य सेवक थे, वे कवि थे, निबंधकार थे, कथाकार थे, प्रहसनकार थे और थे आदर्श पत्रकार उन्होंने आदर्श जीवन मूल्यों को बढ़ावा और प्रोत्साहन देने के लिये सदैव लेखनी चलाई। आपका व्यंग्य फलक बहुत विस्तृत है। उन्होंने व्यक्ति, समाज, धर्म, राजनीति, साहित्य – न कहे कि किसी भी क्षेत्र की विसंगतियाँ उनसे छिप नहीं सकी हैं।– सभी पर उन्होंने व्यंग्य प्रहार किये है।, किनतु उनके व्यंग्य कटु नहीं हैं। व्यक्तिगत भी नहीं हैं, वे सदा मृदुल तथा सुधारात्मक हैं। डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा की प्रस्तुत कृति की समीक्षा करते हुए प्रो. शत्रुध्न दुबे ने लिखा है– ''डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा की आलोच्य कृति में इसी सत्य और तथ्य की युक्ति–युक्त समीक्षा प्रस्तुत की गयी है। आज जब पुरानी पीढ़ी के ऐसे श्रेष्ठ रचनाकारों की घोर उपेक्षा हो रही है, तब डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा द्वारा इस पीढ़ी के एक श्रेष्ठ व्यंग्यकार के समग्र व्यंग्य साहित्य की श्रेष्ठता को हिंदी जगत के समक्ष प्रस्तुत किया जाना निश्चय ही प्रशंसनीय है।''[2]

---

[1] दैनिक नव भारत, ग्वालियर, 19 जून सन् 2005

[2] मासिक ''लोकयज्ञ' वीर (महाराष्ट्र) सितम्बर, 2005, पृष्ठ 19

'kks/k izca/k & Mk- gjh'kadj 'kekZ] O;fDrRo vkSj —frRo dk vkykspukRed v/;;u ¼vizdkf'kr½

आगरा विश्वविद्यालय, आगरा के हिंदी विषय में पीएच.डी. उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध प्रबंध के परीक्षणोपरान्त जून सन् 1972 में डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा को पी–एच.डी. उपाधि से विभूषित किया गया, प्रस्तुत शोध प्रबंध में आलोच्य विषय को अध्ययन के लिये आठ अध्यायों में विभक्त किया गया है। अध्याय एक में– पूर्ववर्ती एवं तद्‌युगीन परिस्थितियों का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया गया है। इस अध्याय की सामग्री प्रायः परारजित है, इस हेतु शोधार्थी के रूप में डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा ने पं. हरिशंकर शर्मा के युग और पूर्ववर्ती पृष्ठभूमि का लेखा–जोखा उपलब्ध अन्तः बाह्य साक्ष्यों के आधार पर प्रस्तुत किया है, इस सामग्री की पुष्टि के लिये जहाँ–तहाँ से पंडित जी को पेाथियों से उघृड़ दिये गये हैं, जिनसे प्रस्तुत सामग्री अत्यधिक विश्वसनीय बन पड़ी है। इस अध्याय में शोधार्थी द्वारा राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक तथा साहित्यिक परिस्थितियों पर प्रकाश डाला गया है। शोध–प्रबंध के द्वितीय अध्याय में पंडित जी का संक्षिप्त जीवन वृत्तांत प्रस्तुत किया गया है, जिसमें उनके जन्म, वंश, शिक्षा–दीक्षा, गृहस्थ जीवन, जीविकोपार्जन तथा जीवन व्यापी संघर्ष की सुपुष्टि कहानी प्रस्तुत की गयी हैं। तृतीय अध्याय में पंडित जी के ग्रन्थों की प्रकाशन तिथि क्रमानुसार प्रामाणिक सूची के साथ ही समस्त कृतियों का सामान्य परिचय भी दिया गया है। चतुर्थ अध्याय में पंडित जी की काव्य कृतियों का समीक्षात्मक अध्ययन किया गया है और पंचम अध्याय में' कथाकार एवं निबंधकार में पंडित जी को एक मात्र उपन्यास विदुषी विन्ध्यावती' के अतिरिक्त पंडित जी की अन्य कुछ गद्य कृतियाँ तथा

पंडित जी द्वारा लिखित कुछ जीवनियों तथा पंडित जी द्वारा लिखित कुछ निबंधों का मूल्यांकन किया गया है।

छठवें अध्याय में पंडित जी का आचार्यत्व दृष्टिगत लिखिते हुए उनके समृद्ध शब्द भण्डार, बहुभाषा ज्ञान के साथ ही रस मीमांसक के रूप में पंडित जी द्वारा रचित 'रसरत्नाकर' का भी अनुशीलन किया गया है। प्रस्तुत अध्याय का भी अनुशीलन किया गया है। प्रस्तुत अध्याय में ही प्रस्तुत छन्दशास्त्र के क्षेत्र में पंडित जी के ग्रन्थ 'छंद विज्ञान की व्यापकता' का महत्वांकलन करने के साथ ही आपके 'उर्दू साहित्य परिचय' पर भी समीक्षात्मक प्रकाश डाला गया है। प्रस्तुत अध्याय में ही पंडित जी की अनुवाद कला का तथा कुछ टीकाओं का भी संक्षिप्त समीक्षात्मक अध्ययन किया गया है।

प्रस्तुत शोध प्रबंध के सप्तम अध्याय में पंडित जी के व्यंग्यकार स्वरूप का ही अध्ययन किया गया है। उनके व्यंग्यों का प्रवृत्यात्मक एवं कलात्मक अध्ययन अनुशीलन करने के अतिरिक्त एक सफल व्यंग्यकार के रूप में हिंदी साहित्य जगत में पंडित जी का स्थान निर्धारित करने का प्रयास किया गया है। प्रस्तुत शोध प्रबंध का आठवाँ अध्याय पंडित जी की पत्रकारिता विषयक मान्यताओं के प्रस्तुतिकरण के साथ ही उनके द्वारा संपादित मासिक 'आर्यमित्र' भारतोद्वय, प्रभाकर, कर्मयोग, इत्यादि ने उनकी संपादकीय सेवाओं का उल्लेख करने के साथ ही हिंदी पत्रकारिता के विकास में पंडित जी के योगदान तथा महत्व पर भी विचार किया गया है। इस प्रकार शोध प्रबंध स्व. पं. हरिशंकर शर्मा के जीवनवृत्त से लेकर उनके हिंदी साहित्य जगत में विशिष्ट योगदान का निरुपण तथा मूल्यांकन प्रस्तुत करता है।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि स्व. पं. हरिशंकर शर्मा मसजीवी साहित्यकार थे, वे जब तक जीवित रहे तब तक उन्होंने हिंदी साहित्य के उन्नयन तथा संवर्धन में जो योगदान दिया, उसे कभी भुलाया नहीं जा सकता, पंडित जी राष्ट्रवादी थे । भारत–भारती में उनकी अटूट आस्था भी देश की समृद्ध संस्कृति एवं आदर्श परम्पराओं को उन्हेांने सदैव सम्मान दिया, उनके साहित्य में शब्द–शब्द से पंडित जी की राष्ट्रीयता एवं उनके देश प्रेम की झलक स्पष्टतः देखी जा सकती है, उनके द्वारा संपादित पत्रों तथा पत्रिकाओं के संपादकीय भी उनके इसी आशय की पुष्टि करते हैं। प्रस्तुत शोध–प्रबंध में लेखक ने सर्वत्र यही प्रमाणित किया है, कि पंडित जी राष्ट्रीय चेतना, भारतीयता एवं आध्यात्मिक, सांस्कृतिक, चेतना के साथ ही आदर्श मूल्यों के लिये सदैव कार्य करते रहे वे एक ऐसे ज्ञानद्वीप थे, जिसका प्रयास युगों–युगों तक देश के देशवासियों तथा हिंदी–प्रेमियों का मार्ग आलोकित करता रहेगा। प्रस्तुत शोध–प्रबंध अप्रकाशित है तथा आगरा, विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में सुरक्षित है।

¼l½ fuc/k lxg ¼&

fucf/kuh ¼vidkf'kr½

डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा का प्रस्तुत निबंध संग्रह अप्रकाशित है, किन्तु इसमें संकलित प्रायः सभी निबंध यहाँ–वहाँ से प्रकाशित देश की अनेक पत्रिकाओं में जब–तब प्रकाशित हुए हैं। विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित ऐसे कुछ निबंधों में से कुछ का चयन प्रस्तुत निबंध संकलन में हुआ है। निबंधकार ने इन निबंधों को एक जगह पुस्तकाकार रूप में सुरक्षित करने की दृष्टि से ही उन्हें प्रस्तुत निबंध संग्रह में स्थान दिया है। प्रस्तुत संकलन के निबंधों की ''वाटिका प्रसंग'', 'शिष्ट श्रृंगार' का

सर्वोत्तम उदाहरण 'रासो' के शशिवृता विवाह प्रसंग का काव्य सौन्दर्य, हिंदी साहित्य का पूर्व मध्यकाल, राष्ट्रीय चिन्ताएँ और साहित्य, आस्था और वर्तमान साहित्य सृजन, संवाद–नाटक के प्राण, बहुत कुछ सीखा है, इनसे। पद्माकर होने का अर्थ, समकालीन कविताः कथ्य और कला, जीवन मूल्य और बाल साहित्य, शिष्ट एवं सुरुचिपूर्ण हास्य व्यंग्य के लेखक पं. हरिशंकर शर्मा, कालजयी तथा शिल्पी मुन्शी प्रेमचन्द्र, कविवर स्वामी सत्यमित्रानन्द की काव्य दृष्टि काव्य में राष्ट्रीयता के ओजस्वी स्वर, श्रंगार काल में वीर रस के इकलौते कवि भूषण, मानसः आदर्श जीवन की आदर्श पाठशाला, वार्धक्य, सच्चा श्राद्ध, अपेक्षित पिता श्री स्व. पं. रामलालः जीवन के कुछ अनछुए प्रसंग इत्यादि निबंध प्रमुख हैं।

निबंधनी के उपर्युक्त निबंध विचारात्मक, भावनात्मक शोध परक तथा इनमे ंसे कुछ निबंध समीक्षात्मक हैं। डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा स्वयं को निबंधकार नहीं मानते लेकिन जब तक उन्होंने कुछ निबंध तो लिखे ही हैं, और वे जहाँ–तहाँ प्रकाशित भी हुए हैं। वास्तव में निबंध को गद्य की कसौटी माना गया है, आशय यही है कि गद्य की अन्य विधाओं की अपेक्षा यह विधा कुछ कठिन अवश्य है। यहाँ कठिन से आशय यही है कि यह विद्या किसी अधकचरे ज्ञान वाले लेखक के हाथों में पहुँच कर हास्य का कारण बनती है। इस विद्या में सफल लेखन के लिये निबंधकार को विषय वस्तु का सम्यक् ज्ञान होना चाहिये तथा अभिव्यक्ति के माध्यम अर्थात् भाषा पर भी अपेक्षित अधिकार होना चाहिये। अच्छे निबंध पाठक के मन पर अपनी छाप तभी छोड़ पाते हैं, जब उनमें विचारों के साथ ही अभिव्यक्ति भी सशक्त हो अर्थात् दोनों का मणिकांचन संयोग ही निबंध को श्रेष्ठ बना सकता है।

प्रस्तुत निबंधों में अधिकांश निबंध ऐसे हैं, जो पठनीय हैं और मनन करने योग्य भी है। 'वाटिका प्रसंग' : शिष्य श्रृंगार का सर्वोत्तम उदाहरण' शीर्षक निबंध की कुछ पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं– ''उभयांगी प्रेम का सफल चित्रण गोस्वामी जी की रस सिद्धता ही प्रभावित ही करता है। राम के मन में सीता जी के अनिदय सौन्दर्य को देखकर एक हलचल सी होती हैं, परन्तु यह हलचल कामोदीप्त कदापि नहीं। जिनेह अपने मन की 'अतिसय प्रतीति' हो तथा जिन्होंने 'सपनेऊ पर नारि न हेरी हो' ऐसे राम भला वासना के वस में कैसे हो सकते थे? यदि उनके मन में किसी प्रकार की दुर्गन्ध रहती, तो वे अपने छोटे भाई लक्ष्मण से 'मदन दुंदुभी की चर्चा न करते उनके सहज पुनीत मन में क्षोभ अकारण उत्पन्न नहीं हुआ है।''[1]

'समकालीन कविता कथ्य और कला' शीर्षक निबंध एक विचारात्मक निबंध है, जिसमें लेखक ने समसामयिक कविता के विविध पहलुओं का अध्ययन करते हुए कविता के अभिव्यक्ति पक्ष अर्थात् कला पक्ष के संबंध में अपने विचार प्रगट किये हैं, प्रस्तुत निबंध से भी कुछ पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं–

'कवि की वाणी का रूप उसके परिवेश के अनुरूप होता है। वह जिस समय में जीता है, जैसा कुछ भोगता, देखता, सुनता या महसूस करता है, उसे ही वह अपनी कविता में अभिव्यक्ति देता है। यथार्थः विभिन्न संस्कारों, प्रभावों, प्रेरणाओं और संवेदनओं के समुच्चय को ही कवि का कथ्य और उसके कथन की भंगिमाओं को उसकी कला कह सकते हैं। युग चेतना को विविध रूप रंगों में मूर्तित करता है।''[2]

---

[1] मासिक 'तुलसीदल' भोपाल जुलाई सन् 1965, पृष्ठ 30

[2] संवाद – युवा लेखन संगोष्ठी ग्वालियर के अवसर पर म.प्र. साहित्य परिषद् द्वारा प्रकाशित, अगस्त सन् 1980, पृष्ठ 40

डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा का 'वार्धक्य' सच्चा श्राद्ध अपेक्षित शीर्षक निबंध भी विचारात्मक है और विचारोत्तेजक भी है, प्रस्तुत निबंध में लेखक ने आज के वृद्धजनों की दयनीय दशा की चर्चा करते हुए उनकी कृतघ्न संतानों द्वारा वृद्धजनों की उपेक्षा कर अपने मन की चिन्ताओं से परिपूर्ण उद्‌गारों को व्यक्त किया है, निबंध का आरम्भ काव्यात्मक ढंग से हुआ है। कुछ पंक्तियाँ देखें–

''ऊषा बेला में जब दिनकर उदित होता है, तब संपूर्ण प्रकृति प्रमुदित होकर नर्तन करने लगती है, मध्यान्ह बेला में जब वही भास्कर अपनी अशेष तेजस्विता के साथ दीप्त एवं तेज बिखेरता हुआ उत्कर्ष के चर्म बिन्दुओं पर पहुँचता है तो सारी सृष्टि में उमंग भरी स्फूर्ति परिव्याप्त जाती है और जब दिवसावसान की बेला सांध्य बेला आती है, तब दिवस भर ऊर्जा वाटते–वाटते थका मादा दिनेश शान्ति और संतोष का सन्देश देकर विलुप्त हो जाता हैं। यह दृष्य हम नित्य देखते हैं, यथार्थः यह कोई दृश्य न होकर सृष्टि के अटल विधान की एक चित्रमय परिभाषा है, जिसका अर्थ समझकर भी कदाचित हम उसे अधिक महत्व नहीं देते।''[1]

सुकवि स्वमी सत्यमित्रानन्द जी गिरि का काव्य सोष्ठव दृष्टि में– लेखक ने स्वामी जी की व्यक्तित्व की प्रमुख गुणों की चर्चा करते हुए उनके कृतित्व का विहंगावलोकन करते हुए जो निष्कर्ष प्रस्तुत किये हें, उनसे भी आध्यात्मिक चेतना और राष्ट्रीय चेतना बलवती होती है, स्वामी जी के विद्वत्तापूर्ण प्रवचनों की चर्चा करते हुए डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा लिखते हैं– ''जिस विषय पर भी आप जब भी प्रवचन करते हैं, तब आपको सुनकर कोई भी अभिभूत हुए बिना नहीं रह सकता। एक–एक

[1] सुकवि स्वामी सत्यमित्रानन्द जी गिरि, काव्य सोष्ठव

शब्द सारगर्भित, एक–एक शब्द नपा–तुला, एक–एक शब्द किसी आभूषण में जुड़े हुए नग की तरह, हर शब्द में प्रेरणा, हर शब्द में रस, हर शब्द में प्रकाश, हर शब्द अनमोल, हर शब्द सहजग्राही और सुबोध, भीतर तक पैठने वाला होता है। जो भी आपको सुनता है, उसे लगता है कि सचमुच वह भाग्यशाली है, हर श्रोता को लगता है कि स्वामी जी की वाणी से कुछ दुर्लभ ही प्राप्त हुआ है।''[1]

निबंधकार के रूप में डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा द्वारा लिखित सभी निबंधों का विश्लेषण, विवेचन न करते हुए यहाँ उनके कुछ निबंधों से ही कुछ पंक्तियाँ उद्धत की गयी हैं। डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा के निबंध ज्यादातर भारतीय संस्कृति तथा समाज के लिये कुछ न कुछ प्रेरक ही प्रस्तुत करते हैं, आपके निबंध कहीं भी जटिल– दुरुह भाषा प्रयोग के कारण बोझिल नहीं हुए हैं और न उनके अभिप्रेत को समझने में ही पाठक के समक्ष कोई कठिनाई होती है। आपने जो निबंध लिखे हैं, उनके विषय, किसी न किसी रूप में व्यापक जन समाज के शुभ की कामना करने वाले ही हैं। उनमें जहाँ एक ओर 'सत्य' है, वहीं उनमें 'शिव' और 'सुन्दर' तत्व भी समाहित है। 'शिष्ट एवं सुरुचिपूर्ण हास्य एवं व्यंग्य के लेखक पं. हरिशंकर शर्मा' शीर्षक निबंध की कुछ पंक्तियाँ यहाँ अवलोकनार्थ प्रस्तुत हैं– ''हिंदी साहित्य में स्व. पं. हरिशंकर शर्मा का स्थान शिष्ट हास्य व्यंग्य लेखन के रूप में अत्यन्त प्रतिष्ठापूर्ण है। युगीन समस्याओं, विसंगतियों, विद्रूपताओं, कुरीतियों, अंधविश्वासों के अतिरिक्त, भृष्ट समाजसेवियों, पतित अधिकारियों, अवसरवादी एवं पदलोलुप नेताओं, प्रमादी एवं लालची साहित्यकारों आदि को आलम्बन बनाकर आपने बड़े सरस, चुटीले व्यंग्य लिखे हैं, जो सीधे मर्म को छूने वाले हैं, फिर भी

[1] मासिक समन्वय साधना पथ हरिद्वार, अक्टूबर सन् 2008, पृष्ठ 23

उनमें किसी की निन्दा व्यक्तिगत आक्षेप या अहित कामना कहीं भी लक्षित नहीं होती। नित्य के जीवन का गहन एवं सूक्ष्म निरीक्षण करके आपने वस्तु–विषय के रूप में बड़े ही सजीव एवं स्वाभाविक विषयों का चयन किया है।''[1]

इस प्रकार निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा का निबंधकार का स्वरूप भी उनके कवि या नाटककार स्वरूप से किसी भी दृष्टि से कम महत्व का नहीं है, आपके प्रायः सभी निबंध राष्ट्रीय चेतना और सामाजिक उत्कर्ष को समृद्ध करने की दृष्टि से ही लिखे गये हैं। आपके विषय जहाँ देश और समाज के चयनित हैं, वहीं उनमें प्रयुक्त भाषा शैली भी कहीं भी सहज नहीं है।

og jkr ¼dgkfu;k| vi\dkf'kr½

प्रस्तुत कथा संग्रह भी अप्रकाशित है एवं उसमें लेखक की मात्रा तीन कहानियाँ तथा कुछ लघु कथाएँ संकलित हैं। इन तीन कहानियों में से प्रथम कहानी है– 'वह रात' प्रस्तुत कहानी एक यथार्थ घटना पर आधारित है, कहानीकार जब ग्वालियर में एल.एल.बी. प्रथम वर्ष में अध्यनरत थे, तब उनके एक मित्र के अनुज का विवाह संपन्न हुआ। उसके निमित्त भिण्ड के एक गाँव में बारात पहुँची। उसी बारात में एक बराती के रूप में कथा लेखक भी सम्मिलित हुआ था। उन दिनों सन् 1959 में बारात के साथ नर्तकियों का जाना एक उच्च स्तरीय और संपन्न परिवार का परिचायक माना जाता था। इस बारात के साथ एक नर्तकी भी गयी थी, संपन्न लोगों की प्रतिष्ठा का यह सूचक माना जाता था। नर्तकी के दल में नर्तकी का पिता तथा भाई भी सम्मिलित हुआ था, भोजनोपरान्त जब महफिल जमी, तब एक अत्यन्त भोंड़े, अमर्यादित तथा अश्लील

---

[1] 'लोकराज' (वार्षिकी) – हिन्दी में हास्य व्यंग्य, मार्च 1976, दिल्ली, पृष्ठ 35

लोकगीत पर उस नर्तकी ने नाचना आरम्भ किया, वह अपने उन्नत वक्ष को उभार–उभार कर नाचे जा रही थी, गा भी रही थी और यहाँ–वहाँ नेत्र कटाक्ष भी करती जा रही थी। नर्तकी का पिता सारंगवादन कर रहा था तथा उसका भाई तबले पर थाप दे रहा था। तभी उस महफिल में से एक व्यक्ति ने उस नर्तकी के पिता का नाम लेकर कहॉ– ''अबे रमजानी! तेरी लोंडिया गाती भी बहुत अच्छा है और कमाल का नाचती भी है। इस कथन की प्रतिक्रिया कथाकार के मन में उथल–पुथल उत्पन्न कर देती है, वह सोचता है कि भारतवर्ष में क्या कोई पिता, क्या कोई भाई अपनी पुत्री या बहन को इस प्रकार अश्लील अमर्यादित देख सकता है। लेखक व्याकुल हो उठता है और उस पूरी रात सो नहीं पाता। 'वह रात' कथाकार के लिये एक ऐसी रात बनकर आती है, जिसमें उसके नैतिक, सांस्कृतिक मूल्य बार–बार उसे झकझोरते हैं, जिनका उत्तर उसे मिल नहीं पाता। यही नैतिक चेतना और नैतिक सन्देश इस कहानी का मूलाधार है, प्रस्तुत कहानी कहीं प्रकाशित नहीं हुई है, किन्तु कथा गोष्ठियों में पढ़े जाने पर उसे बहुत सराहा गया है।

कथाकार डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा की इस दूसरी कहानी का शीर्षक है– 'भैया यह क्या' यह कहानी भी एक वास्तविक घटना पर ही आधारित है। प्रस्तुत कहानी में मुँह बोली बहन के साथ दुराचार होता है, वह अभागी बहन ऐसे दुष्ट सुभाओं के कथित भाई को कोसती रह जाती है, यहाँ भी नैतिक मूल्यों पर कुठाराघात देखकर लेखक का हृदय आक्रोशित हो उठता है। लेखक की तीसरी कहानी 'भाई साहब' एक आदर्श मानव के सराहनीय चरित्र को प्रस्तुत करती है। एक वैधव्य पीड़िता का पड़ौसी एक सगे भाई से भी बढ़कर समाज के समक्ष एक अनुकरणीय आदर्श प्रस्तुत करता है। यह आस–पास के लोगों के द्वारा

लांछित होने पर भी अपनी उस मान्य बहन को जैसा सहयोग देता है, वैसा समाज में बहुत कम देखने को मिलता है। भाई–बहन के अप्रतिम प्रेम का सन्देश देना ही प्रस्तुत कहानी का मूल उद्देश्य है।

कहानीकार के रूप में डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा ने 'विभ्रम' शीर्षक से कुछ लघु कथाएँ लिखी हें, जो झाँसी से प्रकाशित पत्र में प्रकाशित हुई थीं। उन कहानियों के माध्यम से भी लेखक को भारतीय जीवन मूल्यों तथा भारतीय संस्कृति से जुड़े कुछ बिन्दुओं के आधार पर लोक चेतना प्रवाहित करने का प्रयास किया है। इन कहानियों का लोक चेतना और लोक संस्कृति के प्रचार–प्रसार की दृष्टि से महत्व तब और भी बढ़ जाता है, जब ये उस संकलन के रूप में प्रकाशित हो जाती। सभी कहानियाँ प्रेरक हैं और किसी न किसी मूल्य परक सन्देश की संवाहिकाएँ हैं।

————————————